तस्वीर



निकोलाई गोगोल

निकोलाई गोगोल

तस्वीर

(पीटर्सबर्ग की कहानियों से)

गार्गी प्रकाशन

द्वितीय पुनर्मुद्रण : फरवरी, 2024
प्रथम पुनर्मुद्रण : फरवरी, 2012
प्रथम संस्करणः जनवरी, 2000

रादुगा प्रकाशन, मास्को द्वारा 1984 में प्रकाशित
'निकोलाई गोगोलः कहानियाँ और लघु उपन्यास' में संकलित'

अनुवादकः मुनीश सक्सेना

गार्गी प्रकाशन

1/4649/45बी, गली न0 -4,
न्यू मॉडर्न शाहदरा, दिल्ली-110032
e-mail : gargiprakashan15@gmail.com
website : www.gargibooks.com

मुद्रकः
प्रोग्रेसिव प्रिन्टर्स
ए-21 ए झिलमिल इण्डस्ट्रियल एरिया
दिल्ली-110095

आवरण चित्रः क॰ सोमोव कृत 'तस्वीर'
पिछला आवरणः अ॰ इबानोव द्वारा 1841 में बनाया गया
गोगोल का चित्र

मूल्यः 25 रुपये

TASVEER: HINDI TRANSLATION OF 'THE PORTRAIT' BY NIKOLAI GOGOL

प्रकाशक की ओर से

उन्नीसवीं शताब्दी के महान रूसी गद्यकारों के अग्रज निकोलाई गोगोल (1809-1852) विश्व-साहित्य के अमिट हस्ताक्षर हैं। रूसी साहित्य में काल्पनिक, रूमानी और असाधारण घटनाओं व पात्रों के आदर्शीकरण और आलंकारिक चित्रण की जो पुरानी परिपाटी चली आ रही थी, उसे पूरी तरह नकारते हुए गोगोल ने अपनी रचनाओं में सामाजिक जीवन की सच्ची और स्वाभाविक छवि अंकित की। इसी के साथ रूसी साहित्य के एक नये युग का आरम्भ हुआ। उनके परवर्ती रचनाकारों ने समाज की नग्न सच्चाईयों की ओर उत्तरोत्तर अपना ध्यान केन्द्रित किया और आम जनता के जीवन को साहित्य का प्रतिपाद्य बनाया।

रूसी साहित्य की इस युगान्तरकारी विभूति के बारे में बेलेंस्की ने कहा था कि "गोगोल की रचनाओं में जीवन के प्रति असीम सच्चाई और फैन्टासी की सादगी के बीच गहरा सम्बन्ध दिखाई देता है। वे न तो जीवन की चाटुकारिता करते हैं और न ही उसकी झूठी निन्दा। जीवन में जो भी मानवीय और सुन्दर है, उसका वे उल्लासपूर्वक चित्रण करते हैं, लेकिन साथ ही साथ उसकी वीभत्सता को भी वे बिल्कुल नहीं छुपाते। इन दोनों ही स्थितियों में वे जीवन के प्रति सत्यनिष्ठ होते हैं।"

गोगोल का जन्म एक जमींदार परिवार में हुआ था। उनके आसपास की जिन्दगी में आदर्श और नैतिकता का अभाव तथा संकीर्ण स्वार्थ और बनियागिरी का बोलबाला था, जो उन्हें बहुत बेचैन करता था। उनकी रचनाओं में यही बेचैनी अपनी सम्पूर्ण तीव्रता और आवेग के साथ अभिव्यक्त हुई है। अपने नकारात्मक पात्रों के ऊपर उन्होंने किन्हीं आदर्श मानवीय गुणों को बेवजह आरोपित नहीं किया। इसके विपरीत, उन्होंने समकालीन रूसी अभिजात वर्ग के चेहरे पर पड़े मुखौटों को नोंचकर उसके असली वीभत्स रूप को पाठकों के सामने उजागर कर दिया।

गोगोल का मानना था कि इन घृणास्पद वीभत्सताओं के बने रहते समाज की प्रगति सम्भव नहीं है। इसीलिए उन्होंने अपने देश-काल की सामाजिक कुरूपता पर पर्दा डालने के बजाय उसकी असली तस्वीर प्रस्तुत की, ताकि भावी पीढ़ियों के लिए सुन्दरता का मार्ग प्रशस्त हो सके।

गार्गी प्रकाशन की ओर से हिन्दी के सुधि-पाठकों को विश्व-साहित्य की अनमोल धरोहर से परिचित कराने के क्रम में हम गोगोल की सुप्रसिद्ध कहानी – 'तस्वीर' का प्रकाशन कर रहे हैं। इस कहानी के केन्द्र में एक दुष्ट सूदखोर की तस्वीर है, जिसे चित्रकार

ने निर्मम अलगाव और बिना किसी सहानुभूति के बनाया था। स्वयं चित्रकार के शब्दों में: ''मैंने उसका चित्र घोर अरुचि से बनाया था और मुझे अपने काम के प्रति तनिक भी आकर्षण नहीं था। मैंने अपनी भावनाओं को दबाने की और मेरी आत्मा में जो घृणा थी उसका दमन करके उसका वैसा ही चित्र बनाने की चेष्टा की जैसा कि वह जीवन में सचमुच था। वह कोई कलाकृति नहीं थी, और यही कारण है कि जो लोग भी उसे देखते हैं वे जिन भावनाओं से प्रभावित होते हैं वे बैचेन, परेशान भावनाएँ होती हैं। कलाकार की भावनाएँ नहीं होतीं ...''

यह तस्वीर सबसे पहले अपने रचनाकार के लिए ही अनिष्टकारी साबित होती है। जिसका आभास होने पर चित्रकार उसे अपने पास से हटा देता है। बाद में घोर पश्चाताप और प्रायश्चित के बाद ही, वह उस दुरात्मा के कुप्रभाव से मुक्त होता है और अपनी आत्मा को निष्कलंक और मन को निर्मल बना पाता है। आगे चलकर वह तस्वीर एक आदमी से दूसरे आदमी के पास पहुँचती है और उनके मन में बेचैनी पैदा करती है तथा लोगों के हृदय में दूसरों के प्रति घृणा, ईर्ष्या और उत्पीड़ित करने की दुष्टतापूर्ण इच्छा पैदा करती है। इस तस्वीर के विनाशकारी प्रभाव के चलते इस कहानी के केन्द्रीय चरित्र, एक प्रतिभावान युवा चित्रकार का अधोपतन होता है और अन्ततः उसकी जिन्दगी तबाह हो जाती है।

नाटकीय और रोचक घटनाओं से परिपूर्ण इस कहानी में गोगोल ने कला और कलाकार के अन्तर्सम्बन्धों की गहराई से छानबीन की है, साथ ही यह दिखाया है कि अनुचित उपायों और आसान रास्तों के जरिये रातों-रात ख्याति और दौलत हासिल करने की ओछी महत्वाकांक्षा एक सृजनशील व्यक्ति को किस तरह पथभ्रष्ट कर देती है। इसके विपरीत, गोगोल के शब्दों में, ''सृष्टा और कलाकार महत्वहीन चीजों में भी उतने ही सशक्त रूप से प्रकट होता है जैसे महान चीजों में; जो कुछ तुच्छ है उसमें भी उसकी कृति में कोई तिरस्कार का भाव नहीं होता, क्योंकि सृष्टा की सुन्दर आत्मा अदृश्य रूप में उसमें व्याप्त रहती है, और जो तुच्छ है वह उसकी आत्मा की आग में तपकर उत्कृष्ट अभिव्यक्ति पाता है।''

आज हमारे देश और पूरी दुनिया के जनमानस में मूल्यहीनता, स्वार्थपरता और क्षुद्रता का अनर्थकारी प्रभाव तेजी से बढ़ रहा है और प्रतिगामी शक्तियों द्वारा नाना प्रकार के मानवद्वेषी विचारों-भावनाओं को महिमा-मण्डित करने का सचेत प्रयास हो रहा है। ऐसे समय में, मनुष्यता की प्रतिष्ठा के लिए दुनिया-भर के मनीषियों के संघर्ष और सृजन की अनमोल विरासत को सामने लाना, उसे जनसुलभ बनाना पहले से कहीं अधिक आवश्यक हो गया है। गोगोल की कहानी—'तस्वीर' का प्रकाशन इसी दिशा में एक विनम्र प्रयास है। पाठकों से आग्रह है कि वे इस पुस्तक के सम्बन्ध में अपनी बेबाक राय और सुझावों से हमें अवश्य अवगत करायें।

जनवरी, 2000 | गार्गी प्रकाशन

भाग 1

जैसी भीड़ें श्चुकिन की तस्वीरों की दुकान पर लगी रहती थीं वैसी कहीं और दिखायी नहीं देती थीं। कारण यह कि इस दुकान में विविधतम प्रकार की विचित्र चीजों का संग्रह हर समय मौजूद रहता था: चित्रों में ज्यादातर तैल-चित्र होते थे, जिन पर गहरे हरे रंग की वार्निश पुती रहती थी और जो गहरे पीले रंग के भड़कीले फ्रेमों में जड़े होते थे। सफेद पेड़ोंवाला सर्दी का दृश्य, गहरा लाल सूर्यास्त आग की तरह दहकता हुआ, मुँह में पाइप लगाये टेढ़ी बाँहवाला फ्लाण्डर्स का किसान, जो देखने में इन्सान से ज्यादा एक ऐसा मुर्गा मालूम होता था जिसे कमीज पहना दी गयी हो—आमतौर पर यही उन चित्रों के विषय होते थे। इसके अलावा कुछ नक्काशी की तस्वीरें भी होती थीं: भेड़ की खाल की टोपी पहने खुसरों मिर्जा की तस्वीर, तोते की चोंच जैसी नाकोंवाले तिकोनी टोपियाँ पहने जरनैलों की तस्वीरें। और, अन्ततः, इस तरह की दुकान के दरवाजों पर भी आमतौर पर उन भोंडी तस्वीरों की गड्डियाँ बन्दनवार की तरह टँगी रहती थीं जो रूसियों की सराहनीय सहज प्रतिभा का प्रमाण होती हैं। एक तस्वीर में महारानी मिलिकत्रीसा किर्बीत्येव्ना को दिखाया गया था, एक और तस्वीर में येरूशलम का शहर दिखाया गया था, जिसके मकानों पर बेहूदा तरीके से लाल धारियाँ पोत दी गयी थीं, जो छलककर जमीन को और दस्ताने पहने प्रार्थना करते हुए दो रूसी किसानों की आकृतियों को काटती चली गयी थीं। आमतौर पर इन कलाकृतियों के खरीददार तो बहुत थोड़े ही होते थे लेकिन देखनेवालों की कोई कमी नहीं होती थी। वहाँ आपको कोई न कोई कामचोर नौकर तस्वीरों को मुँह बाये देखता हुआ जरूर मिल जाता, अपने हाथों पर ढकी हुई तश्तरियाँ सँभाले जिनमें वह अपने आश्वस्त मालिक के लिए किसी ढाबे से खाना ले जा रहा होता, जो अभी थोड़ी ही देर में अपने आपको ऐसा सूप पीता हुआ पायेगा जो केवल नाममात्र को ही गरम होगा। उसके सामने आपको पाबन्दी से कबाड़ी बाजार का चक्कर लगानेवाला लम्बा कोट पहने कोई सिपाही दो चाकुओं का मोल-तोल करता दिखायी देता; फिर बक्से में जूते भरे ओख्ता की कोई ऐसी औरत होती जो अपना सारा वक्त बाजारों में बिताती थी। हर आदमी जो कुछ देखता है उसकी तरफ प्रतिक्रिया अलग-अलग ढंग की होती थी: किसान आमतौर पर उँगली उठाकर इशारा करते थे; फेरीवाले माल को बड़ी संजीदगी से देखते-भालते थे; घरों और दुकानों में नौकरी करनेवाले छोकरे खीसें निकालकर हँसते थे और छेड़ने के लिए एक-दूसरे की तुलना किसी न किसी बदसूरत तस्वीर से करते थे; नमदे के लम्बे कोट पहने बूढ़े नौकर सिर्फ इसलिए देखते रहते थे कि उन्हें थोड़ी-सी जम्हाई लेने का मौका मिल जाये; और बाजार

धूल से अटी खस्ता हालत के बावजूद चर्तकोव को उसके चेहरे पर से मैल साफ करने पर स्पष्ट दिखायी दे रहा था कि वह किसी श्रेष्ठ कलाकार की कृति थी। ऐसा लगता था कि वह तस्वीर पूरी नहीं हो पायी थी; लेकिन चित्रकार की तूलिका की शक्ति सराहनीय थी। उसकी सबसे असाधारण विशेषता थी उसकी आँखें: उनके चित्रण में कलाकार ने अपने भरपूर उत्साह और काफी प्रतिभा का परिचय दिया था। वे देखनेवाले को बिल्कुल जीती-जागती आँखों जैसी तीव्रता के साथ ऐसे पलटकर घूरती थीं कि चित्र का सारा सामंजस्य ही नष्ट हो जाता था। जब वह तस्वीर को दरवाजे के पास लाया तो आँखें उसे और भी तेजी से घूरने लगीं। आम देखनेवालों पर भी उनका लगभग ऐसा ही प्रभाव होता था। एक औरत, जो उसके पीछे आकर खड़ी हो गयी थी, चिल्ला पड़ी: ''वह देख रहा है!'' और फौरन पीछे हट गयी। चित्रकार के मन में एक विचित्र भावना उठी, एक ऐसी भावना जिसकी व्याख्या वह स्वयं नहीं कर सकता था; उसने तस्वीर जमीन पर रख दी।

''तो, यह तस्वीर आप ले रहे हैं?'' दुकानदार ने कहा।

''कितने की है?'' चित्रकार ने पूछा।

''अरे, भला इसके मैं ज्यादा क्या लूँगा? पचहत्तर कोपेक में दे दूँगा!''

''नहीं।''

''तो, आप कितने देंगे?''

''बीस,'' चित्रकार ने चलने की तैयारी करते हुए कहा।

''वाह, यह भी कोई रकम हुई? बीस कोपेक में तो आपको फ्रेम भी नहीं मिलने का। तो, क्या आप कल आकर खरीदना चाहते हैं? रुकिये तो, साहब, इधर तो आइये! दस कोपेक और दे दीजिये तो तस्वीर आपकी। अच्छी बात है, बीस में ही ले जाइये। बोहनी करना है, पहला ग्राहक खाली लौटाना नहीं चाहता।''

उसने मामला निबटाते हुए हाथ इस तरह हिलाया मानो कह रहा हो: ''जरा सोचिये, बीस कोपेक में तस्वीर दे दी!''

इस तरह चर्तकोव ने बिल्कुल कोई इरादा न रखते हुए पुरानी तस्वीर खरीद ली और ऐसा करते हुए मन ही मन सोचने लगा: ''मैंने इसे खरीदा क्यों? इसका मैं करूँगा क्या?'' लेकिन अब बच निकलने का कोई रास्ता नहीं था। उसने जेब से बीस कोपेक निकालकर दुकानदार को दिये और तस्वीर अपनी बगल में दबाकर चल दिया। रास्ते में उसे याद आया कि उसने जो बीस कोपेक चुकाये थे वे उसके आखिरी पैसे थे। अचानक उसके दिमाग पर धुँधलका छा गया और पूर्ण उदासीनता के साथ मिली हुई झुँझलाहट की लहर उसके सारे शरीर पर दौड़ गयी। ''लानत है इस सड़ी हुई जिन्दगी पर!'' उसने ऐसी घोर निराशा से कहा जिसका शिकार मुसीबत के दिन आने पर हर रूसी हो जाता है। और वह हर चीज से बेखबर लगभग मशीनी रफ्तार से तेज कदम बढ़ाता हुआ चलता रहा। आधे आसमान पर अभी तक सूर्यास्त की लालिमा छायी हुई थी; जिन इमारतों का सामना इस दिशा में था उन पर उसका हल्का-हल्का गर्म रंग झलकता रहा और दूसरी तरफ चाँद की ठण्डी नीली-नीली रोशनी की

चमक बढ़ती गयी। इमारतों और राहगीरों की शाम के वक्त की अर्ध-पारदर्शी परछाइयाँ जमीन पर बिछी हुई थीं। चित्रकार ने झिलमिलाती हुई कल्पनातीत रोशनी में नहाये हुए आसमान को ध्यान से देखा और लगभग एक साथ ही कहा: "कैसी सुन्दर आभा है!" और "कैसी झुँझलाहट होती है कमबख्त इसको देखकर!" और तस्वीर को सँभालते हुए जो बार-बार उसकी पकड़ से फिसली जा रही थी, उसने अपने कदम तेज कर दिये।

थककर चूर और पसीने में नहाया हुआ वह किसी तरह गिरता-पड़ता वसीलेव्स्की द्वीप पर पन्द्रहवीं लाइन में पहुँचा। हाँफते हुए वह गन्दी सीढ़ियों पर चढ़ा जिन पर मैला पानी चारों ओर फैला हुआ था और कुत्तों और बिल्लियों ने अपने नित्यकर्म से जहाँ-तहाँ उन्हें सजा रखा था। उसने दरवाजा खटखटाया तो कोई जवाब नहीं मिला; घर पर कोई नहीं था। वह धीरज से बड़ी देर तक इन्तजार करने की तैयारी में खिड़की के सहारे टिककर खड़ा हो गया, इतने में उसे अपने पीछे नीली कमीज पहने हुए एक लड़के के कदमों की आहट सुनायी दी, जो उसका नौकर भी था, उसके लिए मॉडल भी बन जाता था, तस्वीर बनाने के रंग भी मिलाता था और झाड़ू-बुहारी भी करता था; सच तो यह है कि वह फर्श को झाड़ू से साफ करने में उतना होशियार नहीं था, जितना कि अपने मैले जूतों से उसे गन्दा करने में था। लड़के का नाम निकीता था और जितनी देर उसका मालिक बाहर रहता था उतना सारा वक्त वह सड़क पर बिताता था। निकीता बड़ी देर तक चाभी लगाने की कोशिश करता रहा तब कहीं जाकर वह उसे सूराख में डाल पाया, जो अँधेरे में मुश्किल से ही दिखायी देता था। आखिरकार दरवाजा खुला। चर्तकोव ने ड्योढ़ी में क़दम रखा जहाँ हर कलाकार के घर की तरह असह्य सर्दी थी, जिसका कलाकारों पर कोई असर नहीं होता। अपना कोट उतारकर उसे निकीता को देने की भी चिन्ता किये बिना वह सीधा अपने स्टूडियो में चला गया, जो नीची-सी छत और धुँधले काँच की खिड़कियोंवाला एक बड़ा-सा चौकोर कमरा था, जिसमें कलाकारोंवाला दुनिया-भर का काठ-कबाड़ जमा था: प्लास्टर की बाँहों के खण्ड, तस्वीरें बनाने के लिए तैयार किये हुए कैनवस, बनाना शुरू करके छोड़ दिये गये चित्रों की रूपरेखाएँ, कुर्सियों पर लटके हुए कपड़े। थकन ने उसे आ दबोचा; उसने अपना कोट उतार फेंका, तस्वीर को अनमनेपन से दो छोटे-छोटे कैनवसों के बीच टिका दिया और उस पतले-से सोफे पर ढेर हो गया जिसके बारे में सच्चाई के साथ यह तो नहीं कहा जा सकता था कि उस पर चमड़ा मढ़ा हुआ था, क्योंकि ताँबे की कीलों की वह कतार जो किसी जमाने में उस चमड़े को अपनी जगह रोके रहती थी, न जाने कब की चमड़े के उस गिलाफ के चंगुल से आजाद हो चुकी थी। यह चमड़े का गिलाफ अब लटक रहा था, जिसकी वजह से निकीता को अब उसके नीचे काले मोजे, कमीजें और दूसरे मैले कपड़े ठूँस देने की सुविधा हो गयी थी। थोड़ी देर बैठने और इतने पतले से सोफे पर जितनी देर लेटना मुमकिन था लेटने के बाद उसने आखिरकार मोमबत्ती मँगवायी।

"मोमबत्ती कोई है ही नहीं," निकीता ने कहा।

"कैसे नहीं है?"

"अरे, कल ही नहीं थी," निकीता ने कहा।

चित्रकार को याद आया कि सचमुच कल भी कोई मोमबत्ती नहीं थी; वह शान्त होकर चुप हो गया। उसने अनमनेपन से कपड़े उतरवाये और अपना झीना ड्रेसिंग-गाऊन पहन लिया।

"हाँ, एक बात और है, मकान-मालिक आया था," निकीता ने कहा।

"पैसे लेने आया होगा, मैं जानता हूँ," चित्रकार ने कन्धे बिचकाकर टिप्पणी की।

"और वह अकेला भी नहीं आया था," निकीता बोला।

"किसके साथ आया था?"

"मालूम नहीं... किसी पुलिसवाले के साथ।"

"पुलिसवाले को क्या काम था?"

"मालूम नहीं; कुछ फ्लैट के बकाया किराये की बात कर रहा था।"

"और अब वे लोग क्या करेंगे?"

"अब वे लोग क्या करेंगे, यह तो मैं जानता नहीं, लेकिन वह कह रहा था कि अगर किराया नहीं देना चाहता तो फ्लैट खाली कर दे; कह गये हैं कि कल फिर आयेंगे, वे दोनों।"

"आने दो," चर्तकोव ने निरीह भाव से कहा और गहरी उदासीनता में डूब गया।

नौजवान चर्तकोव प्रतिभाशाली कलाकार था, जिसमें आगे चलकर बहुत कुछ कर दिखाने की सम्भावनाएँ थीं: उसकी कलाकृतियों में बहुधा सूक्ष्म अवलोकन, कुशाग्रता और प्रकृति के निकट पहुँचने की उत्सुकता की झलक मिलती थी। "सुनो, भाई," उसका प्रोफेसर अकसर उससे कहा करता था: "तुममें प्रतिभा है और बहुत ही पाप की बात होगी अगर तुम उसे नष्ट कर दोगे। लेकिन तुम अधीर हो। तुम्हारे दिमाग में कोई एक विचार आता है, कोई एक चीज तुम्हारे दिमाग पर छा जाती है और बस : फिर तुम्हारे पास और किसी चीज के लिए वक्त ही नहीं रहता; हर चीज तुम्हें कूड़ा लगती है, और तुम उसकी ओर देखना भी नहीं चाहते। ध्यान रखना, कहीं तुम भी उन फैशनेबुल चित्रकारों जैसे न बन जाना। तुम्हारी तस्वीरों के रंग अभी से कुछ-कुछ चटकीले हो चले हैं। तुम्हारी रेखाओं में काफी दृढ़ता नहीं है: कभी-कभी तो वे इतनी क्षीण हो जाती हैं कि रेखा दिखायी ही नहीं देती। तुम्हें अपनी तस्वीरों में रोशनी के प्रचलित प्रभाव पैदा करने की, दृष्टि को तुरन्त अपनी ओर आकर्षित कर लेनेवाले ढंग से तस्वीरें बनाने की बहुत चिन्ता रहती है—अगर तुमने सावधानी न बरती तो आखिर में चलकर तुम भी अंग्रेजों की शैली में चित्र बनाने लगोगे। सावधान रहना: तुम्हारे अन्दर समाजी तड़क-भड़क की तरफ झुकाव पैदा होता जा रहा है; कभी-कभी मैंने तुम्हें भड़कीला स्कार्फ, चमकीली हैट पहने देखा है... बहुत जी ललचाता है, मैं जानता हूँ, और बड़ी आसानी से ऐसा हो सकता है कि तुम बहुत पैसा लेकर फैशनेबुल चित्र और समाज के

प्रतिष्ठित लोगों की तस्वीरें बनाने लगो। लेकिन यह तुम्हारे लिए अपनी प्रतिभा को विकसित करने का नहीं बल्कि उसे नष्ट करने का तरीका होगा। धीरज से काम लो। हर चित्र के बारे में ठीक से सोचो, और बाँकेपन को भूल जाओ: उस तरह से पैसा कमाने का काम दूसरों को करने दो। वक्त आने पर तुम्हें अपनी मेहनत का फल मिलेगा।''

कुछ बातों की दृष्टि से प्रोफेसर का कहना ठीक था। यह सच है कि हमारे चित्रकार के मन में कभी-कभी बन-ठनकर रंगरेलियाँ करने की—यानी अपने जवान खून को खुली छूट दे देने की—लालसा पैदा होती थी। लेकिन वह इन आवेगों पर काबू पा लेता था। कभी-कभी ऐसा भी होता था कि हाथ में ब्रुश उठा लेने के बाद वह हर चीज को भूल जाता था, और जब वह उससे अलग होता था तो ऐसा लगता था जैसे कोई बहुत सुहाना सपना देखते-देखते अचानक चौंककर जाग पड़ा हो। उसकी रुचि में व्यापकता आ गयी थी। वह अभी तक रफाएल की पूरी गहराई तो नहीं समझ सका था, लेकिन गुइदो रेनी की प्रवाहमयी तूलिका की ओर वह आकर्षित होने लगा था, टिशियन के चित्रों पर मन्त्रमुग्ध होने लगा था और फ्लाण्डर्स के कला-प्रवीणों की कृतियों को सराहने लगा था। इन पुरानी कलाकृतियों के बारे में उसकी दृष्टि पर पहले जो परदा पड़ा हुआ था उसे वह पूरी तरह तो नहीं बेध सका था, लेकिन अब वे उसकी समझ में कुछ-कुछ आने लगी थीं, हालाँकि अपने मन में वह प्रोफेसर की इस राय से सहमत नहीं था कि ये पुराने धुरन्धर कलाकार हमसे बहुत आगे थे; वह यह भी महसूस करता था कि कुछ बातों में उन्नीसवीं शताब्दी ने उनके मुकाबले में काफी प्रगति की थी, और यह कि प्रकृति का हमारा चित्रण उनकी तुलना में कहीं अधिक स्पष्ट, सजीव और मूल के निकट होता था; दूसरे शब्दों में, इस मामले में वह उसी तरह सोचता था जैसे वे सभी नौजवान सोचते हैं जो कुछ नया उपलब्ध कर चुके होते हैं और उन्हें बड़े गर्व से इसका आभास रहता है। कभी-कभी उसे बहुत झुँझलाहट होती थी जब वह देखता था कि किसी विदेशी चित्रकार ने, किसी फ्रांसीसी या जर्मन ने, जो बहुधा तो अपने व्यवसाय की दृष्टि से चित्रकार होता ही नहीं था, केवल अभ्यास से, तूलिका से हाथ की कोई सफाई दिखाकर और जीते-जागते रंगों की मदद से सनसनी पैदा कर दी और आनन-फानन ढेरों पैसा बटोर लिया। झुँझलाहट की यह भावना उसे उस समय बिल्कुल परेशान नहीं करती थी जब वह अपने काम में पूरी तरह डूबा होता था, उस वक्त तो वह खाना-पीना तक भूल जाता था; यह भावना केवल तब पैदा होती थी जब उसकी हालत इतनी खस्ता हो जाती थी कि ब्रुशों और रंगों तक के लिए उसके पास पैसे नहीं रह जाते थे, और उसका जिद्दी मकान-मालिक दिन में दस बार किराये का तकाजा करने आता था। तब उसकी कल्पना धनी कलाकारों के सौभाग्य के बारे में ईर्ष्या से सोचने लगती थी; तब उसके मन में वह ज्वार उठता था जिसका शिकार रूसी अकसर हो जाता है: सब कुछ ठुकरा दे और पागलों की तरह सब कुछ अनाप-सनाप लुटा दे। इस समय वह लगभग ऐसा ही महसूस कर रहा था।

''हुँह, धीरज रखो, धीरज रखो!'' उसने चिढ़कर कहा, ''धीरज रखने की भी हद होती है। धीरज रखो! और कल मैं अपना पेट भरने के लिए खाना कहाँ से खरीदूँगा? कोई मुझे कर्ज भी तो नहीं देगा। और अपनी सब तस्वीरें और रेखाचित्र बेचने की कोशिश करने से कोई फायदा नहीं: सारी तरस्वीरों के बीस कोपेक मिलेंगे। अलबत्ता उनसे फायदा हुआ है; उनमें से हर एक ने किसी न किसी तरह मेरी मदद की है, मुझे कुछ न कुछ सिखाया है। लेकिन सचमुच वे किस काम की हैं?—वे सभी अभ्यास के लिए बनाये गये प्राथमिक चित्रों और रेखाचित्रों की शक्ल में हैं, और वे कभी पूरी नहीं होंगी। और मेरा नाम जाने बिना उन्हें खरीदेगा कौन? किसे जरूरत है मेरे आर्ट स्कूल के दिनों के अभ्यास-चित्रों की, या साइकी के प्रेम के अधूरे चित्र की, या मेरे कमरे की तस्वीरों की, या मेरी निकीता की तस्वीर की, हालाँकि वह उन फैशनेबुल चित्रकारों की बनायी हुई तस्वीरों से कहीं अच्छी है? मैं परेशानी क्यों उठाऊँ? मैं मुसीबत क्यों झेलूँ, स्कूली बच्चे की तरह क-ख-ग में ही क्यों सिर खपाता रहूँ जबकि मैं उन्हीं जैसा प्रतिभाशाली सफल चित्रकार बन सकता हूँ और पैसा कमा सकता हूँ?''

यह कहकर चित्रकार अचानक सिहर उठा और उसका रंग पीला पड़ गया; फर्श पर टिके हुए कैनवस में से उसने एक विकृत सरसामी चेहरे को अपनी ओर घूरते देखा। दो डरावनी आँखें उसे ऐसे बेध रही थीं जैसे उसे जिन्दा ही खा जायेंगी; उस चेहरे के होंठ चुप रहने का भयावह आदेश व्यक्त कर रहे थे। डरकर उसने निकीता को पुकारना चाहा, जिसके कान के परदे फाड़ देनेवाले खर्राटे ड्योढी में से सुनायी दे रहे थे; लेकिन अचानक वह रुक गया और हँस पड़ा। उसकी डर की भावना तुरन्त गायब हो गयी। यह वही तस्वीर थी जो उसने अभी कुछ देर पहले खरीदी थी और जिसे वह तबसे भूल भी चुका था। कमरे में छिटकी हुई चाँदनी की आभा में उस तस्वीर में सप्राणता का एक विचित्र भाव पैदा हो गया था। वह उसे ध्यान से देखने लगा और उसकी गर्द झाड़ने लगा। उसने स्पंज का टुकड़ा पानी में भिगोकर कई बार तस्वीर को पोंछा, और उस पर गर्द और मैल की जो परत जम गयी थी उसे लगभग पूरी तरह साफ कर दिया, उसे अपने सामने दीवार पर टाँग दिया और पहले से भी ज्यादा हैरत से उस सराहनीय कलाकृति को एकटक देखने लगा: पूरे चेहरे में जैसे जान पड़ गयी थी और उसकी आँखें उसे ऐसी बेधती हुई नजरों से घूर रही थीं कि वह आखिरकार सिहरकर पीछे हट गया और उसने चकित स्वर में कहा: ''यह मुझे देख रही है, मुझे बिल्कुल इन्सानों जैसी आँखों से देख रही है!'' तब उसे लियोनार्दो द विंची की बनायी हुई एक तस्वीर का किस्सा याद आया जो उसने बहुत पहले अपने प्रोफेसर से सुना था; प्रवीण कलाकार ने उस चित्र को बनाने में कई वर्ष लगाये थे, लेकिन वह उसे अभी तक अधूरा ही समझता था और जो वाजारी के शब्दों में बिल्कुल निष्कलंक और उत्कृष्ट कलाकृति थी। उस चित्र की सबसे सराहनीय विशेषता थी उसकी आँखें, जिन्हें देखकर कलाकार के समकालीन चकित रह गये थे; कलाकार की दृष्टि महीन से महीन डोरों को देखने

से नहीं चूकी थी और वे सभी उस चित्र में अंकित थे। लेकिन इस समय जो चित्र उसके सामने था उसमें कोई बहुत ही विचित्र बात थी। वह कला की परिधि से परे थी: वह स्वयं उस चित्र के सामंजस्य को ही भंग कर रही थी। ये आँखें जीती-जागती, इन्सानी आँखें थीं! वे इस तरह देखती थीं जैसी किसी के सिर में से निकालकर उस तस्वीर में जड़ दी गयी हों। इस चित्र का मनन करने से आत्मा का उस प्रकार उत्कर्ष नहीं होता था जैसा की सच्ची कलाकृति से होना चाहिये, उसका विषय कितना ही भयानक क्यों न हो; इस चित्र को देखकर एक अस्वस्थ, रुग्ण प्रतिक्रिया होती थी। ''यह क्या चीज हो सकती है?'' कलाकार मन ही मन अपने से प्रश्न कर रहा था। ''कुछ भी हो, यह है तो प्रकृति ही, सच्ची, जीती-जागती प्रकृति: इसलिए मेरे मन में यह विचित्र भावना क्यों उठ रही है? कहीं ऐसा तो नहीं है कि प्रकृति का ऐसा अन्धा, ऐसा हूबहू चित्रण करना गलत हो, और वह हमें अप्रिय और असंगत लगता है? या इसका मतलब यह है कि अगर किसी वस्तु का चित्रण निर्मम अलगाव की भावना से, बिना किसी सहानुभूति के किया जाये तो वह केवल स्वयं अपनी भयानक वास्तविकता के रूप में सामने आयेगी, जिसमें उस ज्योति का लेश भी नहीं होगा जो उसमें उस समय उत्पन्न होती है जब उसका चितेरा उसमें किसी अजेय विचार का समावेश कर देता है। यह तो उस प्रकार की वास्तविकता है जो उस दशा में प्रकट होती है जब आप किसी उदात्त व्यक्ति के आन्तरिक सत्त्व तक पहुँचने की कोशिश में चाकू लेकर उसे चीर डालें और उसकी आँतों का वीभत्स दृश्य खोलकर सामने रख दें। ऐसा क्यों होता है कि एक कलाकार सीधी-सादी, सपाट प्रकृति का चित्रण इस तरह करता है कि वह एक प्रकार की दिव्य आभा से आलोकित हो उठती है, कि उसके सपाटपन का आभास, सर्वथा लुप्त हो जाता है और, इसके विपरीत, आप उल्लसित अनुभव करते हैं और उसके बाद आपको अपने चारों ओर की हर चीज अधिक सुगमता से और अधिक शान्त भाव से प्रवाहित होती हुई लगती है, जबकि कोई दूसरा कलाकार उसी विषय को लेता है और उसे निकृष्ट तथा वीभत्स रूप में प्रस्तुत करता है, हालाँकि वह पूरी तरह यथार्थनिष्ठ रहता है। लेकिन नहीं, वह उसमें कोई आन्तरिक आभा नहीं उत्पन्न कर पाता। वह बस एक बहुत अच्छे दृश्य के समान होता है: वह कितना ही भव्य क्यों न हो, फिर भी अगर सूरज न चमकता हो तो ऐसा लगता है कि उसमें किसी चीज का अभाव है।''

वह फिर से उन आश्चर्यजनक आँखों को ध्यान से देखने के लिए तस्वीर के पास गया और एक बार फिर उसे वही डरावना आभास हुआ कि वे उसे देख रही हैं। यह प्रकृति का कोई प्रतिरूप नहीं था, यह तो वह विचित्र, जानदार भाव था जो कब्र में से निकल आनेवाले मुर्दे के चेहरे पर देखने की उम्मीद की जा सकती है। शायद यह स्वप्न जैसी सरसामी हालत चाँदनी की वजह से पैदा हो रही थी, जो हर चीज को अपनी मायावी ज्योति से नहलाये दे रही थी, और दिन की रोशनी में दिखायी देनेवाली आकृतियों को मिथ्या रूप प्रदान कर रही थी; या शायद यह कोई दूसरी ही चीज थी,

लेकिन अचानक उसे कमरे में अकेले बैठते डर लगने लगा। वह चुपचाप तस्वीर के पास से चला आया, और एक तरफ मुड़ कर उसकी ओर न देखने की कोशिश करने लगा, लेकिन उसकी आँखे थीं कि बरबस उसी ओर मुड़ी जा रही थीं। नौबत यहाँ तक पहुँची कि उसे कमरे में चलते भी डर लगने लगा; उसे ऐसा लगा कि कोई उसके पीछे आ रहा है और वह डरा-डरा-सा सिर पीछे घुमाकर अपने कन्धे के ऊपर से देखने लगा। वह डरपोक किस्म का आदमी नहीं था; लेकिन उसकी कल्पना और उसकी तन्त्रिकाएँ संवेदनशील थीं और उस रात इस अनायास भय का कारण खुद उसकी समझ में नहीं आ रहा था। वह कोने में बैठा था, लेकिन सहसा उसे आभास हुआ कि कोई उसके कन्धे पर झुककर उसका चेहरा देख रहा है। ड्योढ़ी में से आती हुई निकीता के खर्राटों की गूँज उसके इस भय को दूर न कर सकी। आखिरकार वह डरते-डरते उठा, इस बात का ध्यान रखकर कि वह अपनी नजरें ऊपर न उठाये, परदे के पीछे गया और बिस्तर पर लेट गया। परदे की एक दरार में से उसे दिखायी दे रहा था कि कमरे में चाँदनी छिटकी हुई थी और उसमें वह तस्वीर दीवार पर टँगी हुई थी। वे आँखे पहले से भी ज्यादा एकाग्रता से, पहले से भी ज्यादा भयानक ढंग से उसे बेध रही थीं, मानों वे बाकी हर चीज को तिरस्कार की दृष्टि से देखती हों। अकथनीय व्याकुलता अनुभव करते हुए वह बहुत कोशिश करके किसी तरह पलंग पर से उठा और चादर लेकर कमरे के पार गया और उसने तस्वीर को उस चादर से पूरी तरह ढक दिया।

इसके बाद वह पहले से कुछ शान्त अनुभव करते हुए लेट गया और कलाकार की दरिद्रता और दुर्दशा के विचारों में, उसे इस दुनिया में जिस काँटों-भरे पथ पर चलना पड़ता है उसके विचारों में खो गया, लेकिन उसकी आँखें चादर से ढकी हुई तस्वीर को देखने के लिए बार-बार परदे की दरार की ओर मुड़ती रहीं। चाँदनी में चादर की सफेदी और उजागर हो उठी थी और उसे ऐसा लग रहा था कि वे भयानक आँखें कपड़े के पार भी दिखायी देने लगी थीं। डर के मारे उसने और भी घूरकर देखा मानो अपने आपको यह विश्वास दिलाना चाहता हो कि यह सब कुछ बकवास था! लेकिन अन्ततः उसने देखा कि यह सच था... उसे बिल्कुल साफ दिखायी दे रहा था: चादर वहाँ नहीं थी... तस्वीर बिल्कुल खुली थी और हर चीज के पार सीधे उसकी ओर एकटक देख रही थी, और उसकी बेधती हुई तीखी नजरें उसके शरीर की गहराई में पैठती जा रही थीं... उसका खून जम गया। उसने देखा कि बूढ़ा हिला और उसने फ्रेम को दोनों हाथों से पकड़ लिया। फिर उसने अपना शरीर ऊपर की ओर उठाया और दोनों टाँगें बाहर निकालकर फ्रेम के बाहर कूद पड़ा... अब परदे की दरार में से उसे सिर्फ खाली फ्रेम दिखायी दे रहा था। कमरा कदमों की चापों के शोर से गूँज रहा था जो परदे के पास आते जा रहे थे। बेचारे कलाकार का दिल धड़कने लगा। जिन्दा से ज्यादा मुर्दा हालत में वह परदे के पीछे से बूढ़े का चेहरा दिखायी देने का इन्तजार करने लगा। थोड़ी देर बाद वह सचमुच दिखायी दिया, वही साँवला चेहरा जिसकी बड़ी-बड़ी आँखें अब कमरे में चारों ओर मँडरा रही थीं। चर्तकोव ने चिल्लाने की कोशिश की लेकिन उसकी आवाज

ने उसका साथ नहीं दिया; उसने हिलने-डुलने की कोशिश की लेकिन उसके हाथ-पाँव बिल्कुल निष्क्रिय हो चुके थे। ढीला-ढाला एशियाई ढंग का लिबास पहने हुए इस लम्बे कद के भयानक प्रेत को वह मुँह बाये घूरता रहा और इन्तजार करता रहा कि देखें अब वह क्या करता है। बूढ़ा उसकी पाँयती बैठ गया और अपने लबादे की सिलवटों के नीचे से कोई चीज निकालने लगा। वह एक थैला था। उसने थैले की डोरी खोली और उसके दोनों कोने पकड़कर उसमें जो कुछ था उसे झटककर बाहर उलट दिया: कई लम्बे-लम्बे, भारी बेलन जैसे बण्डल थप-थप की आवाज करते हुए जमीन पर गिर पड़े; हर बण्डल नीले कागज में लिपटा हुआ था और उस पर लिखा हुआ था: 10,000 रूबल। चौड़ी-चौड़ी आस्तीनों में से अपना लम्बा हड़ीला हाथ बाहर निकालकर बूढ़े ने बण्डलों पर लिपटा हुआ कागज खोलना शुरू किया और उनके अन्दर से सोने की चमक दिखायी दी। कलाकार अपनी अपार व्यथा और निःसंज्ञ कर देनेवाले भय के बावजूद सोने के इन सिक्कों की ओर से अपनी नजरें न हटा सका और जैसे-जैसे बण्डल खुलते गये वह मन्त्रमुग्ध होकर उनकी चमक को और बूढ़े के हड़ीले हाथों में उनकी दबी-दबी खनक को सुनता रहा; और आखिरकार उन्हें फिर कागज में लपेट दिया गया। उसी वक्त उसने देखा कि एक बण्डल फर्श पर लुढ़ककर पलंग के सिरहाने की ओर चला गया था। वह उन्मादियों की तरह उसकी ओर झपटा और घबराकर देखने लगा कि बूढ़े ने उसे देख तो नहीं लिया है। लेकिन बूढ़ा अपने ही काम में खोया हुआ लग रहा था। उसने अपने सारे बण्डल बटोरे, उन्हें थैले में वापस रखा और कलाकार की ओर एक नजर भी देखे बिना परदे के पीछे गायब हो गया। उसके वापस लौटते हुए कदमों की चाप सुनकर चर्तकोव का दिल और भी जोर से धड़कने लगा। उसने अपना बण्डल और भी कसकर पकड़ लिया, वह सिर से पाँव तक काँपने लगा और अचानक उसके कदमों की चाप फिर परदे की ओर आती हुई सुनी। बूढ़े को शायद याद आया कि वह एक बण्डल भूल गया था। घोर निराशा में डूबकर चित्रकार ने बण्डल अपनी सारी ताकत से दबोच लिया, अपने कदम आगे बढ़ाने की कोशिश की, चिल्लाया—और उसकी आँख खुल गयी।

उसको ठण्डा पसीना छूट रहा था; उसका दिल जोर से धड़क रहा था; उसका सीना कसकर इतना सिकुड़ गया मानो उसकी आखिरी साँस किसी तरह उसमें से निकल जाने की कोशिश कर रही हो। "क्या यह सब कुछ सचमुच एक सपना था?" उसने अपना सिर दोनों हाथों से पकड़ते हुए कहा; लेकिन जो कुछ उसने देखा था वह सब ऐसा जीता-जागता था कि वह सपने जैसा बिल्कुल लगता ही नहीं था। आँख खुलने पर उसने देखा कि बूढ़ा तस्वीर के फ्रेम में वापस जा रहा था; उसे उसके ढीले-ढाले लबादे के छोर की एक झलक भी दिखायी दी, और उसे अपने हाथ पर किसी ऐसी भारी चीज के स्पर्श का आभास हुआ जिसे वह अभी एक मिनट पहले ही पकड़े हुए था। कमरे में भरपूर चाँदनी फैली हुई थी और उसके अँधेरे कोनों में पहुँचकर किसी कैनवस पर, प्लास्टर ऑफ-पेरिस की बनी हुई किसी बाँह पर, कुर्सी पर बिछे हुए कपड़े पर, पतलून पर और कीचड़ में सने बूट पर अपनी रोशनी बिखेर रही थी। अब जाकर उसे इस बात

का आभास हुआ कि वह अपने पलंग पर नहीं लेटा हुआ था बल्कि उस तस्वीर के सामने सीधा खड़ा हुआ था। वह यहाँ कैसे पहुँचा था यह उसकी समझ में बिल्कुल नहीं आ रहा था। यह देखकर उसे और भी हैरत हुई कि तस्वीर खुली हुई थी और उस पर कोई चादर नहीं पड़ी हुई थी। डर के मारे वह स्तब्ध रह गया और तस्वीर को घूरता रहा; उसने देखा कि उसकी जीती-जागती आँखें सचमुच उसे बेध रही थीं। उसके चेहरे पर ठण्डे पसीने की बूँदें छलक आयीं; वह वहाँ से हट आना चाहता था लेकिन उसने महसूस किया कि उसकी टाँगें जमीन में गड़ गयी हैं। और तब उसने देखा—और अब यह कोई सपना नहीं था—कि बूढ़े का चेहरा गतिमान हो उठा और उसकी ओर देखकर वह अपने होंठ इस तरह भींचने लगा मानों वह उसे चूस लेना चाहता हो... वह डर के मारे चीखकर उछल पड़ा और उसकी आँख खुल गयी।

"कहीं यह भी तो सपना नहीं था?" उसका दिल इतनी तेजी से धड़क रहा था जैसे अभी फट जायेगा; उसने हाथ बढ़ाकर अपने आस-पास टटोलकर देखा। हाँ, वह अपने बिस्तर पर अब भी उसी हालत में लेटा हुआ था जिस हालत में वह रात को सोया था। उसके सामने परदा था; कमरे में चाँदनी फैली हुई थी। परदे की दरार में से उसे तस्वीर दिखायी दे रही थी, उसी तरह चादर से ढकी हुई जैसा कि उसे होना चाहिए था—ठीक उसी हालत में जैसा कि उसने उसे छोड़ा था। तो यह भी सपना था! लेकिन अब भी उसे अपनी भिंची हुई मुट्ठी में कोई चीज होने का आभास हो रहा था। उसका दिल बेहद तेजी से धड़क रहा था; उसके सीने में असह्य भारीपन था। वह दरार के पार चादर को एकटक देखता रहा। उसी वक्त उसने चादर को खिसकते हुए बिल्कुल साफ देखा, जैसे उसके नीचे से किसी के हाथ उसे उतार फेंकने की कोशिश कर रहे हों। "हे भगवान, यह क्या हो रहा है!" वह घबराकर चिल्लाया, आतंकित होकर उसने अपने ऊपर सलीब का निशान बनाया और जाग पड़ा।

यह भी सपना था! वह उछलकर बिस्तर से नीचे उतर आया; उसके होश-हवास पूरी तरह ठिकाने नहीं थे और वह समझ नहीं पा रहा था कि उसे आखिर हो क्या रहा है: क्या उसने कोई बुरा सपना देखा था जिसका यह असर था, या कोई दैत्य था, बुखार की सरसामी हालत थी या जीवन की वास्तविकता? अपनी उद्विग्नता को शान्त करने के लिए और खून की तूफानी गर्दिश को धीमा करने के लिए उसने खिड़की के पास जाकर उसका पल्ला खोल दिया। हवा के ठण्डे झोंके से उसके होश-हवास ठीक हुए। मकानों की छतें और सफेद दीवारें अभी तक चाँदनी में नहायी हुई थीं, हालाँकि काले-काले बादलों के छोटे-छोटे टुकड़े आसमान पर तेजी से दौड़ रहे थे। चारों ओर खामोशी छायी हुई थी: उसके कानों में बस कभी-कभी दूर से किसी अनदेखी गली में धीरे-धीरे चलती हुई घोड़ागाड़ी की खड़खड़ाहट की आवाज आ जाती थी, जिसका कोचवान अपनी सीट पर सो रहा होगा और उसका मरियल घोड़ा अपनी लद्धड़ चाल से गाड़ी खींच रहा होगा और दोनों किसी भूली-भटकी सवारी के मिल जाने का इन्तजार कर रहे

होंगे। वह बड़ी देर तक खिड़की के बाहर सिर निकाले वहाँ खड़ा रहा। आनेवाले तड़के की पहली दमक आसमान पर दिखायी देने लगी थी; आखिरकार चुपके-चुपके नींद ने उसे आ घेरा और यह महसूस करके उसने खिड़की बन्द की, वहाँ से चला आया और अपने बिस्तर पर लेटकर गहरी नींद सो गया।

जब वह सुबह बहुत देर से सोकर उठा तो उसे ऐसा लग रहा था कि जैसे रात उसने बहुत पी ली हो और अब नशा उतर रहा हो; उसके सिर में धमक हो रही थी। उसके कमरे में हल्की-हल्की रोशनी फैली हुई थी और तस्वीरों और रंग की पहली परत लगाकर चौखटों पर मढ़े हुए कैनवसों से अटी हुई खिड़कियों की संदों में से रिस-रिसकर आनेवाली बाहर की हवा की नमी महसूस हो रही थी। बारिश में भीगे हुए चूजे की तरह उदास और चिढ़ा हुआ वह अपने टूटे फूटे सोफे पर बैठा सोच ही रहा था कि अब क्या करे कि इतने में उसे अपने सपने की याद आयी। दिमाग में लौटकर आने पर वह सपना उसे इतनी भयानक हद तक स्पष्ट लग रहा था कि उसे शक होने लगा कि वह सचमुच सपना या केवल सरसामी हालत का उन्माद था ही नहीं बल्कि कोई दिव्य दर्शन था। चादर खींचकर हटा देने के बाद उसने दिन की रोशनी में उस विचित्र तस्वीर को बड़े ध्यान से देखा। बात सच थी, उसकी आँखें आश्चर्यजनक हद तक बिल्कुल जीती-जागती आँखों जैसी थीं, लेकिन उसे उनमें कोई खासतौर पर डरावनी बात दिखायी नहीं दी; बस इतनी बात थी कि उन्हें देखकर उसके दिल में एक विचित्र और अरुचिकर संवेदना पैदा हुई। फिर भी वह अपने आपको पूरी तरह विश्वास न दिला सका कि उसने जो कुछ देखा था वह सपना था। वह कल्पना करने लगा कि उस सपने के साथ वास्तविकता का कुछ भयानक अंश मिला हुआ था। उस बूढ़े के चेहरे-मोहरे और हाव-भाव में कोई बात ऐसी थी जो मानो यह कह रही थी कि पिछली रात वह बूढ़ा उसके साथ था; उसके हाथ को ऐसा आभास हो रहा था कि जैसे अभी वह कोई भारी चीज पकड़े हुए था जो अभी एक क्षण पहले ही उससे छीन ली गयी थी। वह अनुभव कर रहा था कि अगर उसने उस बण्डल को जरा और कसकर पकड़ा होता तो जागने के बाद वह उसके हाथ में ही होता।

"हे भगवान, काश इस रकम का थोड़ा-सा हिस्सा भी मेरे हाथ लग जाता!" उसने गहरी आह भरकर कहा, और अपनी कल्पना में उसने देखा कि सारे बण्डल थैले के बाहर उड़ेले जा रहे थे और उनमें से हर एक पर ये ललचानेवाले शब्द लिखे थे: 10,000 रूबल। बण्डल खोले गये, सोने की जगमगाहट हुई और बण्डल फिर लपेट दिये गये; वह एकटक शून्य में ताकता हुआ निश्चल बैठा रहा, अपने आपको वह किसी तरह इस दृश्य से अलग नहीं कर पा रहा था, जैसे कोई बच्चा मिठाई की तश्तरी के सामने ललचाया हुआ बैठा हो और दूसरों को उसे खाते हुए लाचारी से देख रहा हो। आखिरकार दरवाजे पर किसी की दस्तक सुनकर वह चौंक पड़ा और फिर होश में आ गया। मकान-मालिक एक पुलिस सार्जेण्ट को साथ लिये हुए अन्दर आया, जिसकी सूरत

देखना गरीब आदमी के लिए उससे भी ज्यादा नागवार होता है जितना कि अमीरों के लिए किसी फरियादी की सूरत देखना होता है। चर्तकोव जिस छोटे-से मकान में रहता था उसका मकान-मालिक उस किस्म के लोगों में से था जो वसीलेव्स्की द्वीप की पन्द्रहवीं लाइन, पीटर्सबर्ग की तरफवाले हिस्से या कोलोम्ना जैसे किसी सुदूर कोने के मकान-मालिकों में अकसर पाये जाते हैं—उस किस्म के लोग जो रूस में बहुत आम हैं और जिनके चरित्र का वर्णन करना उतना ही मुश्किल है जितना घिसे हुए फ्रॉक-कोट के रंग का। अपनी जवानी के दिनों में यह मकान-मालिक एक बड़बोला कप्तान था, जिसे कभी-कभी गैर-फौजी कामों पर भी लगा दिया जाता था; वह कोड़े बरसाने में बहुत उस्ताद था, बेहद कारगुजार, छैल-चिकनिया और निरा बुद्धू, लेकिन बुढ़ापे में इन सारे गुणों ने एक-दूसरे में मिलकर चरित्र की एक धुँधली अस्पष्टता का रूप धारण कर लिया था। अब उसकी बीवी मर चुकी थी, वह रिटायर हो चुका था, छैल-चिकनिया नहीं रह गया था, न ही बड़बोला रह गया था और न ही जान पर खेल जानेवाला; उसे अब सिर्फ चाय पीने में और चाय पीते हुए गप लड़ाने में दिलचस्पी रह गयी थी; वह अपने कमरे में टहल-टहलकर अपनी मोमबत्ती की भकभकाती हुई लौ काटकर ठीक करता रहता था; हर महीने के आखिर में पाबन्दी के साथ किराया वसूल करने के लिए अपने किरायेदारों के चक्कर लगाता था; अगर वह छत का मुआइना करने के लिए सड़क पर निकलता था तो चाभी अपने हाथ में लिये रहता था; घर का दरबान जब भी सोने के लिए चुपके से अपनी कोठरी में जाता वह उसे वहाँ से बार-बार खदेड़कर बाहर निकाल लाता; दूसरे शब्दों में, वह उस किस्म के पेंशनयाफ्ता लोगों में से था जिनके पास बेलगाम जवानी बिताने के बाद और अपनी जिन्दगी इस तरह काट देने के बाद जैसे गाड़ी पर बैठकर किसी ऊबड़-खाबड़ सड़क पर झटके खाते हुए जा रहे हों, टुच्चेपन की आदतों के अलावा कुछ भी नहीं बच जाता।

"आप खुद ही देख लीजिये, वरूख कुजमिच," उसने अपने हाथ फैलाकर पुलिस सार्जेण्ट को सम्बोधित करके कहा: "यह अपने फ्लैट का किराया नहीं चुकाता, एक कोपेक भी नहीं देता।"

"जब मेरे पास पैसा है ही नहीं तो चुकाऊँ कहाँ से? कुछ मोहलत दीजिये, मैं सब चुका दूँगा।"

"मैं इन्तजार नहीं कर सकता, भले आदमी," मकान-मालिक ने उसकी तरफ चाभी हिलाते हुए गुस्से से कहा; "मेरे किरायेदारों में एक अफसर हैं, लेफ्टिनेण्ट-कर्नल पोतोगोंकिन, वह सात साल से मुझसे जगह किराये पर लेते रहे हैं; और फिर आन्ना पेत्रोव्ना बुखमिस्तेरोवा हैं, जिन्होंने एक शेड और अस्तबल में दो थान भी किराये पर ले रखे हैं, उनके पास तीन नौकर हैं—इस तरह के किरायेदार हैं मेरे। मैं तुम्हें साफ-साफ बता दूँ कि मैं उस तरह का ठिकाना नहीं चलाता हूँ जहाँ लोग किराया चुकाये बिना रह सकें। मेहरबानी करके मेरा किराया अभी चुका दो और घर खाली कर दो।"

"हाँ, इस बात को देखते हुए कि तुमने किराया चुकाने की हामी भर ली है इसलिए बेहतर यही है कि तुम चुका ही दो," सार्जेण्ट ने एक उँगली अपनी वर्दी के कोट के सामने अटकाते हुए सिर को हल्का-सा झटका देकर कहा।

"यह तो आपका कहना ठीक है लेकिन मैं चुकाऊँ किस चीज से? मेरे पास तो पीतल का एक कोपेक भी नहीं है।"

"उस हालत में तुम्हें किसी चीज की शक्ल में, अपने धन्धे की पैदावार की शक्ल में इवान इवानोविच का भुगतान करना होगा," सार्जेण्ट ने कहा। "मुमकिन है वह तस्वीरों की शक्ल में किराया लेने को तैयार हो जाये।"

"नहीं-नहीं, सार्जेण्ट साहब, शुक्रिया, लेकिन तस्वीरों की शक्ल में नहीं। अगर किसी भली चीज की तस्वीरें होतीं जिन्हें दीवार पर टाँगा जा सकता तब बात दूसरी थी, कम से कम स्टारवाले किसी जनरल की या प्रिंस कुतूजोव की तस्वीर होती, लेकिन यह तो अपने नौकर की तस्वीर बनाता है, फटी कमीज पहने हुए उस छोकरे की जो इसके रंग पीसता है। सोचने की बात है कि उस सुअर की तस्वीर बनायी जाये—मैं उसके ऐसे कान ऐठूँगा कि याद करेगा: उसने मेरी तमाम चटकनियों की कीलें उखाड़ डाली हैं, चोर कहीं का। जरा देखिये तो इन तस्वीरों को: यह इसने अपने कमरे की तस्वीर बनायी है। अगर कोई साफ-सुथरा ढंग का कमरा होता तब भी ठीक था, लेकिन इसने तो जिस हालत में कमरा था उसी की तस्वीर बना दी, चारों तरफ कूड़ा-करकट और गन्दगी फैली हुई। जरा देखिये तो इसने मेरे कमरे की क्या दुर्गत की है, आप खुद ही देख लीजिये। और मेरे कुछ किरायेदार सात-सात साल से यहाँ रह रहे हैं, शरीफ किरायेदार, कर्नल, आन्ना पेत्रोव्ना बुखमिस्तेरोवा... नहीं, मैं आपको साफ बता दूँ: किसी कलाकार को किरायेदार रखने से बुरी तो कोई बात हो ही नहीं सकती; वह अपने कमरे को बिल्कुल सुअरों का बाड़ा बना देता है, ऐसे लोगों से तो भगवान ही बचाये।"

इस दौरान बेचारे चित्रकार को चुपचाप खड़े रहकर यह सब कुछ सुनना पड़ रहा था। सार्जेण्ट ने तस्वीरों और अभ्यास के लिए बनाये गये खाकों को ध्यान से देखना शुरू किया, और ऐसा करते हुए उसने इस बात का परिचय दिया कि उसका दिमाग मकान-मालिक से कहीं अधिक सजग था और कलात्मक प्रभाव ग्रहण करने की क्षमता से सर्वथा वंचित नहीं था।

"अ-हा," उसने एक तस्वीर को, जिसमें एक नंगी औरत को दिखाया गया था, उँगली से कोंचते हुए कहा, "यह है जरा... क्या कहा जाये? मजेदार चीज। लेकिन उस तस्वीर में नाक के नीचे काला धब्बा-सा क्यों है, नसवार गिर पड़ी है या और कुछ है?"

"वह परछाई है," चर्तकोव ने उसकी ओर देखे बिना रुखाई से जवाब दिया।

"खैर, लेकिन मेरी राय में तो उसे ठीक नाक के नीचे लगाने के बजाय कहीं और लगाना चाहिए था—आँख में खटकता है," सार्जेण्ट ने कहा, "और यह किसकी तस्वीर

है?'' वह बूढ़े की तस्वीर के पास आकर कहता रहा। ''कैसा बदसूरत चेहरा है। क्या यह जिन्दगी में भी ऐसा ही बदसूरत था? देखो तो, देखता कैसे है—डर के मारे जान ही निकल जाये! है किसकी तस्वीर?''

''अरे, किसी की नहीं, वह तो बस यों ही..." चर्तकोव ने कहा, लेकिन किसी चीज के चटकने की जोरदार आवाज से उसकी बात अधूरी ही रह गयी। सार्जेण्ट तस्वीर के फ्रेम पर जरूरत से ज्यादा जोर डालकर टिक गया होगा; पुलिसवाले के तगड़े हाथों के बोझ से बगलवाली पट्टियाँ टूटकर अन्दर धँस गयीं, उनमें से एक टूटकर जमीन पर भी गिर पड़ी और नीले कागज में लिपटा हुआ एक बण्डल जोरदार छनाके के साथ नीचे आ गिरा। उस पर लिखे शब्द पढ़कर चर्तकोव की आँखे चमक उठीं: 10,000 रूबल। वह झपटकर बण्डल पर टूट पड़ा और उसे अपनी मुट्ठी में दबोच लिया।

''बिल्कुल सिक्कों के गिरने जैसी आवाज थी," किसी चीज के गिरने की आवाज सुनकर सार्जेण्ट ने कहा, लेकिन चर्तकोव इतनी तेजी से झपटा था कि वह देख नहीं पाया कि क्या चीज थी।

''आपको इससे क्या मतलब कि मेरे पास क्या है?"

''मुझे मतलब यह है कि तुम्हें अपने मकान-मालिक को फ्लैट का किराया फौरन अदा करना होगा; तुम्हारे पास पैसा है लेकिन तुम देना नहीं चाहते—बस यही मतलब है मुझे।"

''अच्छी बात है, मैं आज चुका दूँगा।"

''पहले क्यों नहीं चुका दिया, बिना वजह अपने मकान-मालिक के लिए इतनी मुसीबत पैदा की, और पुलिस के लिए भी?"

''क्योंकि मैं इस पैसे को देना नहीं चाहता था; मैं आज शाम को सारा हिसाब चुका दूँगा और कल फ्लैट खाली कर दूँगा, क्योंकि मैं ऐसे मकान-मालिक के यहाँ रहना ही नहीं चाहता।"

''तो, इवान इवानोविच, यह पैसे चुका देगा," सार्जेण्ट ने मकान-मालिक से कहा। ''और अगर किसी वजह से आज शाम तक यह आपकी तसल्ली न कर दे, तो हमें कोई सख्त कार्रवाई करनी पड़ेगी, समझ गये, कलाकार साहब?''

यह कहकर उसने अपनी तिकोनी टोपी पहन ली और दरवाजे से बाहर निकल गया; मकान-मालिक भी सिर झुकाये विचारों में खोया हुआ-सा उसके पीछे हो लिया।

''चलो, जान छूटी!'' ड्योढ़ी का दरवाजा बन्द होने की आवाज सुनकर चर्तकोव ने कहा।

उसने ड्योढ़ी में नजर डाली, निकीता को किसी काम से बाहर भेज दिया ताकि वह बिल्कुल अकेला रह जाये, निकीता के चले जाने पर दरवाजा अन्दर से बन्द कर लिया और कमरे में वापस आकर बण्डल खोलने लगा। उसका दिल जोर से धड़क रहा था। उस बण्डल में दस-दस रूबल के सिक्के थे; हर एक सीधे टकसाल से ढलकर

आया हुआ और आग की तरह दमकता हुआ। खुशी से पागल होकर वह सोने के ढेर के पास बैठा हैरत करता रहा और सोचता रहा कि कहीं यह सपना तो नहीं है। बण्डल में ठीक एक हजार सिक्के थे; बाहर से देखने में बण्डल बिल्कुल वैसा था जैसा उसने सपने में देखा था। कुछ देर वह उन्हें अपने उँगलियों से छेड़ता रहा, उन्हें उलट-पलटकर ध्यान से देखता रहा; उसके हवास ठिकाने नहीं आ रहे थे। उसकी कल्पना में छिपे हुए खजानों और चोर-तालोंवाली उन तिजोरियों के सारे किस्से मँडलाते रहे, जो पूर्वज यह यकीन रखते हुए अपनी औलाद के लिए छोड़ जाते थे कि उनकी औलाद तबाह तो हो ही जायेगी और बाद में चलकर बिल्कुल कंगाल हो जायेगी। वह सोच रहा था:

''कहीं ऐसा तो नहीं है कि किसी दादा-परदादा ने अपनी औलाद के लिए तोहफा छोड़ जाने के इरादे से परिवार की किसी तस्वीर के फ्रेम में यह रकम छिपा दी हो?" काल्पनिक भ्रमों के प्रवाह में वह यह भी सोचने लगा कि इस घटना का भी कहीं उसकी अपनी तकदीर के साथ तो कोई सम्बन्ध नहीं है, कहीं उसे इस तस्वीर का मिलना खुद उसके मुकद्दर के साथ तो नहीं जुड़ा हुआ है, और उस तस्वीर का उसके हाथ लगना कोई ऐसी बात तो नहीं जो पहले से उसके भाग्य में लिख दी गयी हो? वह बड़े ध्यान से तस्वीर के फ्रेम का निरीक्षण करने लगा। एक तरफ लकड़ी में एक गड्ढा बनाकर उसे इतनी सफाई से लकड़ी के तख्ते से छिपा दिया गया था कि अगर वह फ्रेम पुलिस सार्जेण्ट के तगड़े हाथ की वजह से टूट न गया होता तो वह रकम अनन्त काल तक वहीं पड़ी रहती। तस्वीर को ध्यान से देखने पर उसे उसकी कलात्मकता पर, आँखों के असाधारण चित्रण पर आश्चर्य हुआ; वे अब उसे भयानक नहीं लग रही थीं, बल्कि हर बार उन्हें देखने पर एक अरुचिकर भावना उसे आ दबोचती थी। ''नहीं," उसने अपने मन में कहा, ''मुझे इसकी परवाह नहीं कि तुम किसके पुरखे थे, लेकिन मैं सुनहरे फ्रेम में तुम्हें काँच में मड़वाऊँगा।" यह कहकर वह अपने सामने पड़े हुए सोने के ढेर की ओर बढ़ा और छूते ही उसका दिल धड़कने लगा। मैं इसका क्या करूँगा?" उसने आँखें गड़ाकर उसे घूरते हुए कहा। ''अब मेरे पास कम से कम तीन साल का बन्दोबस्त है, मैं अपने कमरे में बन्द होकर काम कर सकता हूँ। अब मेरे पास रंगों के लिए, खाने के लिए, चाय के लिए, अपनी रोजमर्रा की जरूरतों के लिए, अपने किराये के लिए काफी पैसा है, अब कोई मेरे रास्ते में रुकावट नहीं बन सकता और न ही मुझे परेशान कर सकता है; अब मैं अपने लिए बहुत बढ़िया पुतला खरीदूँगा, प्लास्टर-आफ-पेरिस का धड़ मँगवाऊँगा, टाँगों के मॉडल लाऊँगा, अपने लिये वीनस की मूर्ति लाऊँगा, पुराने कला-प्रवीणों की छपी हुई तस्वीरें जमा करूँगा। और अगर मैंने कोई जल्दबाजी किये बिना, बिक्री की कोई चिन्ता किये बिना, तीन साल काम कर लिया, तो मैं उन सबसे आगे बढ़ जाऊँगा, मैं महान कलाकार बन जाऊँगा।"

उसका विवेक उससे यह कह रहा था, लेकिन उसके अन्तरतम में कहीं और गहराई से एक और आवाज सुनायी दे रही थी, जो ज्यादा तेज थी और ज्यादा आसानी

से समझा-बुझाकर राजी कर लेनेवाली थी। उसने एक बार फिर सोने के सिक्कों के उस ढेर को देखा और अपनी बाईस वर्ष की उमड़ती हुई जवानी के वेग को और भी तीव्र रूप में अनुभव किया। अब उसके वश में वह सब कुछ था जिसे वह हमेशा से सराहता आया था और जिसके लिए वह दूर से ललचाता रहा था। उसके विचार से ही उसके खून की गर्दिश तेज हो गयी। फैशनबुल टेलकोट पहनना, अपना बरसों पुराना संयम तोड़ना, एक शानदार नया फ्लैट किराये पर लेना, फौरन थिएटर की तरफ, पेस्ट्री की दुकान की तरफ रुख करना... वगैरह-वगैरह, और अपना पैसा समेटकर वह सड़क पर निकल गया।

सबसे पहले वह दर्जी के यहाँ गया, सिर से पाँव तक नये कपड़ों में सज गया, और अपने आपको बाल-सुलभ आश्चर्य से ताकता रहा; उसने तरह-तरह के इत्र और क्रीमें खरीदीं और नेव्स्की एवेन्यू पर जो पहला फ्लैट मिला उसे मोल-तोल किये बिना किराये पर ले लिया; बहुत ही बढ़िया घर था, आइने लगे हुए और चौड़ी-चौड़ी फ्रांसीसी खिड़कियाँ; बदहवासी में अपने लिए बिना कमानी का चश्मा खरीद लिया, और उतनी ही बदहवासी में उसने ढेरों रेशमी गुलूबन्द खरीद लिये, अपनी जरूरत से कहीं ज्यादा, सैलून में जाकर अपने बाल घुँघराले कराये, किसी वजह के बिना ही गाड़ी पर बैठकर शहर के दो चक्कर लगाये, पेस्ट्री की दुकान में जाकर इतनी मिठाइयाँ छककर खायीं कि जी मितलाने लगा और एक फ्रांसीसी रेस्तराँ में गया जिसके बारे में उसने उड़ती-उड़ती अफवाहें ही सुन रखी थीं, और जिससे उसका उतना ही दूर का सम्बन्ध था जितना चीन से। उसके सिर में शराब पीने की वजह से कुछ धमक होने लगी और जब वह अकड़ता हुआ बाहर सड़क पर निकला तो ऐसा महसूस कर रहा था कि अगर शैतान भी मुकाबले पर आ जाये तो उससे भी वह निबट लेगा। बिना कमानीवाले अपने चश्मे से हर ऐरे-गैरे को घूरता हुआ वह सड़क की पटरी पर ऐंठता हुआ चला जा रहा था। पुल पर उसे अपना पुराना प्रोफेसर दिखायी दिया और वह बड़ी चालाकी से उनसे कतराकर निकल आया; प्रोफेसर पुल पर हक्का-बक्का खड़ा रह गया और उसका चेहरा विकृत होकर सवालिया निशान की शक्ल का हो गया।

उसने अपनी सारी चीजें–ईजिल, कैनवस, तस्वीर–उसी दिन शाम को अपने नये शानदार फ्लैट में पहुँचा दीं। अपनी सबसे अच्छी तस्वीरें उसने प्रमुख स्थानों में लगा दीं, जो बुरी थीं उन्हें एक कोने में झोंक दिया और फिर अपने शानदार कमरों में टहलने लगा; उसकी नजरें बार-बार आईनों की ओर मुड़ जाती थीं। उसके हृदय में यह अदम्य इच्छा उमड़ी आ रही थी कि उसी क्षण ख्याति की गर्दन पकड़कर सारी दुनिया के सामने आ जाये! उसे अभी से यह शोर सुनायी देने लगा था: चर्तकोव, चर्तकोव! तुमने चर्तकोव की तस्वीर देखी? क्या नजाकत है इस चर्तकोव के ब्रुश में भी! कैसा जबर्दस्त कमाल का हुनर है!" वह बहुत उद्विग्न होकर अपने कमरे में टहलता रहा, उसके दिमाग में इस तरह के विचारों का बवण्डर उठता रहा। अगले दिन सोने के दस सिक्के लेकर वह एक लोकप्रिय अखबार के प्रकाशक के पास

उसकी मदद लेने गया; पत्रकार ने बड़े तपाक से उसका स्वागत किया, फौरन उसे "जनाबे-आली" कहकर सम्बोधित किया, अपने हाथों में चर्तकोव के दोनों हाथ थामकर हाथ मिलाया, विस्तार के साथ उसका नाम, बाप का नाम, पता-ठिकाना पूछा, और अगले ही दिन एक नई तरह की चर्बी की मोमबत्तियों के इश्तहार के नीचे इस शीर्षक से एक लेख छपा 'चर्तकोव और उनकी सराहनीय कला'। उस लेख में कहा गया था: "हम शहर के पढ़े-लिखे नागरिकों को जल्दी से जल्दी एक सुखद और शानदार नयी उपलब्धि की सूचना दे देना चाहते हैं। इससे तो कोई इन्कार नहीं करेगा कि हमारे समाज को कितने ही बहुत बढ़िया चेहरों-मोहरों और शानदार सूरतों पर नाज है, लेकिन अब तक हमारे पास ऐसे साधन नहीं थे कि हम आनेवाली पीढ़ियों की खातिर उन्हें चमत्कारी कैनवसों पर उतार सकें; अब यह कमी पूरी हो गयी है: हमारे बीच एक ऐसा कलाकार उभरा है जिसमें ये सारे गुण मौजूद हैं। अब समाज की हर कोमलांगी ललना के लिए इस बात का आश्वासन हो गया है कि उसके सुकुमार सौन्दर्य के सारे लालित्य को, उसकी आकर्षक, मुग्धकारी आभा सहित चित्र में उतारा जा सकेगा, वसन्त के फूलों के बीच मँडराती हुई तितलियों की तरह। परिवार के बड़े बूढ़े अपने आपको अपने परिवार के प्रियजनों के बीच देख सकेंगे। सौदागर, सूरमा, सिपाही, आम नागरिक, राजनेता—सभी अपने-अपने उदात्त काम नये उत्साह से करते रह सकेंगे। जल्दी कीजिये, जल्दी कीजिये, चहलकदमी छोड़िये, किसी दोस्त, रिश्तेदार के यहाँ या तड़क भड़कवाली दुकान में जाने का काम फिर कभी के लिए उठा रखिये—आप जो भी काम कर रहे हों उसे रोक दीजिये, आप जहाँ कहीं भी हों फौरन चले आइये। इस कलाकार के शानदार स्टूडियो में (नेव्स्की एवेन्यू, नम्बर फलाँ-फलाँ) उसकी तूलिका के चमत्कार की कुछ उत्कृष्ट कृतियाँ प्रदर्शित हैं, उस तूलिका के चमत्कार की जिस पर वान डाइक और टिशियन जैसे कलाकारों को भी नाज होता। आप यह नहीं बात सकेंगे कि कौन-सी चीज अधिक प्रभावशाली है, उनका सत्याभास और मूल से उनकी समानता, या तूलिका का असाधारण रूप से ताजा और जीता-जागता काम। धन्य हो, कलाकार! जीवन की लाटरी में तुम्हारे टिकट का नम्बर निकल आया है। जिन्दाबाद, अन्द्रेई पेत्रोविच!" (जैसा कि हम देख सकते हैं, पत्रकार को अपनेपन का पुट देना पसन्द था।) "अपने आपको और हम सब लोगों को गौरवान्वित करो। हमसे तुम्हें उचित सराहना मिलेगी। हमारी कामना है कि तुम्हारे पास लोगों का ताँता बँधा रहे, वे ढेरों पैसा लाकर तुम पर लुटायें, हालाँकि हमारे कुछ साथी पत्रकार इसके खिलाफ हैं, और यही तुम्हारा पुरस्कार हो।"

हमारे चित्रकार ने मन ही मन सन्तोष अनुभव करते हुए लेख पढ़ा; उसका चेहरा सचमुच खिल उठा। उसकी ख्याति अखबारों तक पहुँच गयी थी: यह उसके लिए एक महान अवसर था; उसने उन पंक्तियों को बार-बार पढ़ा। वान डाइक और टिशियन से अपनी तुलना की बात उसे विशेष रूप से सन्तोषप्रद लगी। "जिन्दाबाद, अन्द्रेई पेत्रोविच!" के नारे से भी वह बहुत खुश हुआ; छपे हुए अक्षरों में कोई उसका पहला नाम और बाप का नाम लेकर उसे सम्बोधित करे, यह उसके लिए ऐसा सम्मान था

जिसकी उसने कभी आशा भी नहीं की थी। वह तेज-तेज कदमों से अपने कमरे में टहलने लगा और अपने बालों को उलझाता रहा; कभी आराम-कुर्सी पर बैठ जाता, और फिर कभी उछलकर खड़ा हो जाता और जाकर सोफे पर बैठ जाता और कल्पना करने लगता कि वह किस तरह अपने यहाँ आनेवाले सज्जनों और महिलाओं का स्वागत करेगा; वह चलकर अपनी बनायी हुई तस्वीर के पास जाता और ब्रुश को तेजी से घुमाता ताकि उसके हाथ की गति में शालीनता आ जाये। अगले दिन उसके दरवाजे की घण्टी बजी। उसने भागकर दरवाजा खोला; एक महिला अन्दर आयीं। उनके आगे-आगे फर का कॉलर लगी हुई वर्दी पहने एक अर्दली था और उन महिला के साथ एक 18 साल की लड़की थी, जो उनकी बेटी थी।

''श्रीमान चर्तकोव?" महिला ने पूछा।

जवाब में कलाकार ने झुककर अभिवादन किया।

''आपके बारे में इतना कुछ लिखा गया है; लोग कहते हैं कि आपकी तस्वीरें निष्कलंक चित्रकला का चरमोत्कर्ष होती हैं।" यह कहकर उन्होंने अपनी नाक पर बिना कमानी का चश्मा चढ़ाया और दीवारों का मुआइना करने के लिए चल पड़ीं—पर हुआ कुछ ऐसा कि दीवारों पर एक भी तस्वीर नहीं थी। ''लेकिन आपकी तस्वीरें हैं कहाँ?"

''अभी लायी जा रही हैं," चित्रकार ने कुछ सिटपिटाकर कहा, इस फ्लैट में अभी आया हूँ, इसलिए वे अभी रास्ते में हैं... अभी पहुँची नहीं।"

''आप इटली में थे?" महिला ने अपने बिना कमानी के चश्मे से उसकी ओर देखते हुए पूछा, क्योंकि कोई और चीज थी ही नहीं जिसकी ओर वह देखती।

''जी नहीं, मैं था तो नहीं लेकिन... मैं वहाँ जाना जरूर चाहता हूँ... दरअसल फिलहाल मैंने वहाँ जाने का इरादा कुछ दिन के लिए टाल दिया है... मेहरबानी करके इस आराम-कुर्सी पर बैठ जाइये, आप थक गयी होंगी...''

''शुक्रिया, बड़ी देर से अपनी गाड़ी में बैठी रही हूँ। अच्छा, वह रहीं, आखिरकार आपका कारनामा दिखायी दे ही गया!" महिला ने झपटकर सामनेवाली दीवार की ओर जाते हुए और जमीन पर रखे हुए अभ्यास-चित्रों, खाकों, रेखाचित्रों और आकृति-चित्रों की ओर अपने बिना कमानी के चश्मे से देखते हुए कहा। 'C'est charmant! Lize, Lize, venez ici!* देखो, बिल्कुल टेनियर जैसा कमरा है: देखो तो, हर चीज कैसी बिखरी हुई, इधर-उधर बेतरतीब पड़ी है, मेज पर रखी हुई धड़ तक की मूर्ति, बाँह, रंग की तख्ती; देखो तो कितनी धूल है, देखो तो धूल की तस्वीर कैसी बनायी है! C'est charmant! और इस तस्वीर में इस औरत को देखो जो अपना मुँह धो रही है– quelle jolie figure!** वाह, किसान! Lize, Lize, रूसी कुरता पहने हुए किसान! देखो: किसान! तो आप सिर्फ पोर्ट्रेट नहीं बनाते हैं?''

* कितना मोहक है! लीजा, यहाँ आओ! (फ्रांसीसी)

** कितना मोहक सुन्दर चेहरा है! (फ्रांसीसी)

''अरे, यह तो यों ही बकवास है... यों ही वक्त काटने के लिए, हाथ साफ करने के लिए कुछ तस्वीरें बनायी हैं...''

''अच्छा, यह बताइये, आजकल के पोर्ट्रेट बनानेवालों के बारे में आपकी क्या राय है? यह बात सच है न कि अब टिशियन की टक्कर का कोई नहीं है? उनके रंगों में वह जोर नहीं होता, और न ही वह... बड़े अफसोस की बात है कि मैं जो कुछ कहना चाहती हूँ वह रूसी में नहीं समझा सकती" (वह महिला चित्रकला में थोड़ा-बहुत दखल रखती थीं और अपने बिना कमानी के चश्मे से इटली की सारी गैलरियाँ देख चुकी थीं)। लेकिन, श्रीमान नॉल... वह बहुत ही लाजवाब चित्रकार हैं! कमाल का हुनर रखते हैं! मेरा तो ख्याल है कि उनके चेहरों में जैसा भाव मिलता है वैसा टिशियन के यहाँ भी नहीं दिखायी देता। आप श्रीमान नॉल को नहीं जानते?"

''यह नॉल कौन साहब हैं?''

''श्रीमान नॉल। अरे, क्या हुनर पाया है। उन्होंने इसकी तस्वीर बनायी थी जब यह बारह साल की थी। आप हमारे यहाँ जरूर आइयेगा। लीजा, श्रीमान को अपनी एलबम तो दिखाओ। मैं आपको बता दूँ कि हम लोग यहाँ इसलिए आये हैं कि आप इसकी पोर्ट्रेट बनाना फौरन शुरू कर दें।"

''क्यों नहीं, बेशक, मैं शुरू करने को तैयार हूँ।"

और पलक झपकते वह ईजिल पास खींच लाया जिस पर चौखटे पर मढ़ा हुआ कैनवस लगा था, अपनी रंग की तख्ती उठायी और लड़की के बेरंग चेहरे पर अपनी नजर जमायी। अगर वह मानव स्वभाव का पारखी होता तो उसने उस लड़की के चेहरे के हाव-भाव से एक क्षण में अन्दाजा लगा लिया होता कि उसके हृदय में कमसिन लडकियों-वाली नाचने की उमंग पैदा होने लगी थी, रात के खाने के समय तक और खाने के बाद की लम्बी अवधि के प्रति उकताहट और असन्तोष की भावना, नयी पोशाक पहनकर टहलने के लिए बाहर निकल जाने की इच्छा जागृत होने लगी थी, दिमाग और चेतनाओं को निखारने के लिए माँ के जबर्दस्ती करने पर विभिन्न कलाओं की ओर जी न चाहते हुए भी ध्यान देने की गहरी छाप दिखायी देने लगी थी। लेकिन उस छोटे-से नाजुक चेहरे में चित्रकार जो कुछ देख सका वह थी बस उसकी कलात्मक रहस्यमयी पारदर्शिता, जैसी बढ़िया चीनी के बर्तनों में होती है, एक आकर्षक कोमल क्लान्ति, एक पतली-सी गोरी-गोरी गर्दन और अभिजात वर्ग की नजाकत। उसे अभी से अपनी विजय का पूर्वाभास होने लगा था; वह अपनी तूलिका की सुकोमलता और प्रतिभा प्रदर्शित करने के लिए कृतसंकल्प था, जिसे अब तक अपनी अभिव्यक्ति के लिए केवल उसके मॉडलों के कठोर चेहरों, प्राचीनकाल की आकृतियों और क्लासिकी उत्कृष्ट कलाकारों की कृतियों की नकल का ही माध्यम मिल पाया था। उसे अपनी कल्पना में अभी से दिखायी देने लगा था कि जब इस सुन्दर मुखड़े की तस्वीर बनकर तैयार होगी तब वह कैसी लगेगी।

''देखिये, बात यह है,'' महिला ने कुछ चिन्तित होकर माथे पर बल डालते हुए कहा, ''मैं चाहती हूँ कि आप इसकी तस्वीर इस तरह बनाइये: इस वक्त यह एक पोशाक पहने है; सच पूछिये तो मेरा जी चाहता है कि वह साधारण आधुनिक पोशाक न पहने होती: मैं चाहती हूँ कि वह कोई सीधा-सादा लिबास पहने किसी पेड़ की छाँव में बैठी हो, पृष्ठभूमि में खेत हो, जिसमें बहुत दूर भेड़ों का गल्ला हो, या पेड़ों का झुरमुट हो... ताकि देखने से यह न लगे कि वह किसी नाच में या किसी फैशनेबुल पार्टी में जा रही है। मैं तो कहती हूँ कि हमारे नाच आत्मा को इतनी बुरी तरह नष्ट कर देते हैं, वे भावनाओं को इतनी बुरी तरह कुचलकर मुर्दा कर देते हैं... मैं सादगी चाहती हूँ, ज्यादा सादगी।"

अफसोस की बात कि माँ और बेटी दोनों ही की मोम जैसी सूरतों से साफ लगता था कि वे ठीक इसी तरह की नाच की महफिलों में अपनी न जाने कितनी रातें नाच-नाचकर बिता चुकी हैं।

चर्तकोव काम में जुट गया; उसने मॉडल को बिठाकर अपनी कल्पना में दृश्य का एक चित्र बनाया। उसने हवा में अपना ब्रुश हिलाकर कुछ कल्पित बिन्दु निर्धारित किये, एक आँख सिकोड़कर पीछे हटा और दृश्य को ध्यान से देखने लगा—और एक ही घण्टे के अन्दर उसने तस्वीर का खाका बनाना शुरू भी किया और खत्म भी कर दिया। परिणाम से सन्तुष्ट होकर उसने फौरन चित्र बनाना शुरू किया और अपने काम में बिल्कुल खो गया। वह बाकी हर चीज को भूल चुका था, यह भूल चुका था कि वह अभिजात वर्ग की महिलाओं के बीच था, और उसने कलाकारों की कुछ सनकीपन की हरकतें भी करनी शुरू कर दी थीं; वह अजीब ढंग से बुदबुदाने लगा और कोई गीत गुनगुनाने लगा, जैसा कि काम में पूरी तरह डूबे होने पर कलाकार करते हैं। झटके के साथ अपना ब्रुश हिलाते हुए उसने बड़ी बेतकल्लुफी से मॉडल से अपना सिर ऊपर उठाने को कहा, इससे पहले कि वह आखिरकार कुनमुनाने लगती और थक जाने की शिकायत करने लगती।

''बस, बहुत हो गया, पहली बार के लिए इतना काफी है,'' महिला ने ऐलान किया।

''जरा-सी देर और,'' कलाकार ने अपने आपको भूलते हुए कहा।

''नहीं, अब रहने दो! लीजा, तीन बज गया है!'' महिला ने अपनी पेटी से सोने की जंजीर से लटकी हुई छोटी-सी घड़ी हाथ में लेकर कहा फिर अधीर होकर बोली: ''अरे, वक्त तो देखो!''

''बस, एक मिनट और,'' चर्तकोव ने सहज भाव से बच्चों जैसे विनीत स्वर में कहा।

ऐसा लग रहा था कि महिला इस बार उसकी कलाकारोंवाली झक को पूरा करने के लिए बिल्कुल तैयार नहीं थीं, लेकिन उन्होंने अगली बार उसे और ज्यादा समय देने का वादा किया।

''सचमुच, मुझे बहुत अफसोस हो रहा है,'' चर्तकोव ने सोचा, ''हाथ में प्रवाह तो अब आया है।'' और उसे याद आया कि जब वह वसीलेव्स्की द्वीप पर अपने स्टूडियो

में काम करता था तब किसी ने कभी उसे टोका नहीं था और न ही बीच में उसका काम रोका था; निकीता एक ही मुद्रा में बिल्कुल निश्चल बैठा रहता था, जितनी देर चाहो उसकी तस्वीर बनाते रहो; उसे जिस मुद्रा में बिठा दिया जाता था उसी में वह सो भी जाया करता था। झुँझलाकर उसने अपना ब्रुश और रंगों की तख्ती कुर्सी पर रख दी और उदास भाव से कैनवस के सामने खड़ा रहा। जब उन भद्र महिला ने उसकी प्रशंसा में कुछ शब्द कहे तब जाकर उसका ध्यान भंग हुआ। उन्हें रास्ता दिखाने के लिए वह दरवाजे की ओर झपटा, और सीढ़ियों पर पहुँचने पर उसे अगले हफ्ते किसी दिन उनके यहाँ खाना खाने के लिए आने का निमन्त्रण मिला। वह अपने आपसे बहुत खुश होकर कमरे में वापस आया। इन भद्र महिला ने उसे बिल्कुल मन्त्रमुग्ध कर लिया था। अब तक वह इस तरह की हस्तियों को अपनी परिधि के बाहर समझता था, जिन्हें सिर्फ इसलिए पैदा किया जाता था कि वे वर्दी पहने हुए अर्दलियों और भड़कीले कोचवानों के साथ शानदार गाड़ियों में घूमती फिरें और अपना फटीचर ओवरकोट पहने सड़क पर पैदल जाते हुए अभागे राहगीरों पर उचटती हुई नजरें डालती रहें। और अब इसी तरह की एक हस्ती उसके अपने कमरे में आयी थी; वह उसकी तस्वीर बना रहा था और एक रईसाना घर में खाने की दावत दी गयी थी। उस पर सन्तोष की अपूर्व भावना छा गयी; बेहद खुश होकर उसने अपने आपको ईनाम देने के लिए बहुत शानदार खाना खाया, उसके बाद थिएटर देखने गया और एक बार फिर गाड़ी पर बैठकर शहर में निरुद्देश्य घूमता रहा।

अगले कुछ दिनों तक वह अपने रोजमर्रा के काम की ओर ध्यान ही नहीं दे सका। वह हर वक्त बेचैनी से कान लगाये सुनता रहता था, उस क्षण की राह देखता रहता था जब दरवाजे की घण्टी बजे। आखिरकार वह भद्र महिला अपनी पीली बेटी को साथ लेकर आयीं। उसने उन्हें बिठाया, फैशनेबुल अन्दाज अपनाने की कोशिश करते हुए बड़ी नजाकत से कैनवस आगे खींचा और तस्वीर बनाने लगा। खिली हुई धूप और तेज रोशनी से उसे बहुत मदद मिल रही थी। उसे अपने दुबले-पतले नाजुक मॉडल में बहुत कुछ ऐसा दिखायी दे रहा था जिसे अगर वह कैनवस पर उतार पाता तो उसकी तस्वीर काफी सराहनीय बन सकती थी; वह समझ रहा था कि मॉडल के बारे में उसकी जो कल्पना थी उसे अगर वह पूरी तरह व्यक्त कर सकता तो वह बहुत शानदार चीज पेश कर सकता था। यह महसूस करके कि वह एक ऐसी चीज को व्यक्त करने जा रहा था जिसे दूसरे लोग देख भी नहीं पाये थे उसका दिल बल्लियों उछलने लगा। उसका काम उसके दिमाग पर पूरी तरह छा गया; उसने अपने आपको अपने ब्रुश की गति में पूरी तरह लीन कर दिया और एक बार फिर अपने मॉडल की अभिजात वर्गीय उत्पत्ति को बिल्कुल भुला दिया। दम साधे हुए वह बड़ी बेचैनी से उस सत्रह साल की लड़की के नाजुक नाक-नक्शे और पारदर्शी शरीर को कैनवस पर उभरते देखता रहा। उसने हर बारीकी को पकड़ लिया, उसकी त्वचा की पीतवर्ण आभा,

आँखों के नीचे की नीलिमा—हर चीज को, और वह उसके माथे के छोटे-से मुँहासे को तस्वीर में जोड़ने जा ही रहा था कि अचानक उसे कहीं ऊपर से उसकी माँ की आवाज सुनायी दी। ''अरे, उसे क्यों बना रहे हैं? उसकी कोई जरूरत नहीं हैं,'' महिला ने कहा। ''और यहाँ भी देखिये, कई जगह... कुछ पीलापन भी आ गया है न, और यहाँ कुछ गहरे धब्बे भी हैं।'' चित्रकार ने समझाना शुरू किया कि उन धब्बों और पीलेपन से कुल मिलाकर बहुत अच्छा असर पैदा होता है, चेहरे का स्वाभाविक और आकर्षक रूप उभर आता है। लेकिन उसे बताया गया कि उनसे न तो कोई रूप उभरता है और न ही कुल मिलाकर कोई अच्छा असर पैदा होता है; और यह कि ये सारी बातें बस उसकी कल्पना की उपज थीं। ''बस मुझे एक जगह पीले रंग का एक हल्का-सा हाथ मार लेने दीजिये। मैं आपके हाथ जोड़ता हूँ,'' चित्रकार ने भोलेपन से कहा। लेकिन उसे उसकी भी इजाजत नहीं दी गयी। सूचना दी गयी कि उस दिन लीजा कुछ उखड़ी-उखड़ी हुई थी और उसके चेहरे की रंगत में कभी कोई पीलापन नहीं रहा था, बल्कि इसके विपरीत उसके चेहरे में कमाल की ताजगी थी। उदास भाव से वह उन खूबियों पर रंग फेरने लगा जिन्हें कैनवस पर उतार लाने में उसके ब्रुश को सफलता मिली थी। कई ऐसी बारीकियाँ जो मुश्किल से ही दिखायी देती थीं गायब हो गयीं और उनके साथ ही चित्र का सत्याभास भी बहुत कुछ जाता रहा। बेजान हाथों से वह तस्वीर पर वे घिसे-पिटे रंग लगाने लगा जिन्हें कोई भी चित्रकार आँखें मूँदकर लगा सकता है, और जो जीती-जागती आकृतियों को भी बेजान और नीरस बना देते हैं, जैसा कि चित्रकला की पाठ्य-पुस्तकों में देखने को मिलता है। लेकिन महिला बहुत सन्तुष्ट थीं कि आँखों में खटकनेवाले वे रंग मिटा दिये गये थे, और उन्होंने बस इस बात पर आश्चर्य प्रकट किया कि तस्वीर पूरी करने में इतना ज्यादा वक्त लग रहा था, और साथ ही यह भी जोड़ दिया कि उन्होंने तो सुन रखा था कि वह दो बैठकों में तस्वीर पूरी कर सकता था। चित्रकार से इसका कोई जवाब देते न बन पड़ा। महिलाएँ उठकर चल देने को तैयार हुईं। उसने अपना ब्रुश रख दिया, उनके साथ दरवाजे तक गया और उनके चले जाने के बाद बड़ी देर तक अपनी बनायी हुई तस्वीर के सामने निश्चल खड़ा उदास भाव से उसे घूरता रहा; वह स्तम्भित रह गया था, उसे उस चेहरे की वे नारी-सुलभ विशेषताएँ, रंगों की वे कोमल आभाएँ और उनके वे अलौकिक उतार-चढ़ाव याद आ रहे थे जिन्हें वह चित्र में उतार लाने में सफल हो गया था और जिन्हें उसे बड़ी बेरहमी से नष्ट कर देना पड़ा था। इस तरह के विचारों में डूबकर उसने तस्वीर को एक तरफ हटा दिया और साइकी का वह रेखाचित्र ढूँढ़ निकाला जो उसने बहुत पहले बनाया था। चेहरा बड़ी दक्षता से बनाया गया था लेकिन वह बिल्कुल नीरस और सपाट था, उसमें केवल अमूर्त आकार थे, जान बिल्कुल नहीं थी। करने को कुछ और न होने की वजह से वह उस तस्वीर पर काम करने लगा, और उसे उसने रंगों के वे सारे उतार-चढ़ाव प्रदान कर दिये जो उसने चित्र बनवाने

के लिए बैठनेवाली उस अभिजात लड़की के चेहरे में देखे थे। जो आकार, जो आभाएँ और रंगों के जो उतार-चढ़ाव उसकी कल्पना ने ग्रहण किये थे उन्हें इस चित्र में उसने उस शुद्ध रूप में स्थानान्तरित कर दिया, जो केवल तभी सम्भव होता है जब चित्रकार बहुत देर तक प्रकृति का गहन अवलोकन करने के बाद उससे अलग हट जाता है और उतनी ही निर्विकार कलाकृति का सृजन करता है। धीरे-धीरे साइकी जीवित हो उठी, और वह विचार जिसका बोध भी मुश्किल से ही होता था अब ठोस रूप धारण करने लगा। उस फैशनेबुल लड़की के चेहरे के सारे लक्षण अनायास ही साइकी के चेहरे को प्रदान कर दिये गये, जिससे उसमें एक असाधारण भाव पैदा हो गया और उस चित्र को एक मौलिक कृति कहलाने का अधिकार मिल गया। ऐसा लगता था कि उसने अपने मॉडल से जो कुछ पाया था उसे उसने अलग-अलग और सामूहिक रूप से इस्तेमाल किया था, और वह अपने काम में पूरी तरह डूब गया था। लगातार कई दिन तक वह पूरी तरह अपने इस चित्र में खोया रहा और उसकी नव-परिचित अभिजात महिलाओं ने उसे तल्लीनता की इसी अवस्था में पाया। वह इसके लिए तैयार नहीं था, उसे तस्वीर को ईजिल पर से हटाने का भी समय न मिल पाया। दोनों महिलाएँ हर्ष-विभोर होकर चिल्ला पड़ीं और तालियाँ बजाने लगीं।

"लीजा, लीजा! वाह, कैसी हूबहू तस्वीर खींची है! Superbe, superbe!* उसे यूनानी लिबास पहनाने का विचार कैसी अनूठी प्रेरणा है। वाह, कैसा चमत्कार है!"

कलाकार की समझ में नहीं आ रहा था, कि उन महिलाओं के दिमाग से यह रुचिकर भ्रम कैसे दूर करे। शरमाते हुए सिर झुकाकर उसने बताया:

"यह साइकी है।"

"साइकी का रूप दे दिया है? अरे, C'est charmant!" माँ ने मुस्कराकर कहा और बेटी ने भी उसी मुस्कराहट को प्रतिबिम्बित किया। "देखो तो, लीजा, साइकी के रूप में तुम्हारा यह चित्र कैसा फबता है। Quelle idee delicieuse!** लेकिन क्या काम है! बिल्कुल कार्रेजियो जैसा लगता है। मैं मानती हूँ कि मैंने आपके बारे में पढ़ा और सुना तो था लेकिन मुझे यह नहीं मालूम था कि आप में इतनी प्रतिभा है। नहीं, अब तो आपको मेरी तस्वीर भी बनानी पड़ेगी।"

मालूम यह हुआ कि वह महिला भी किसी साइकी के रूप में दिखायी देना चाहती थीं।

"अब मैं इनका क्या करूँ?" कलाकार ने सोचा। "अगर वे ऐसा ही चाहती हैं तो साइकी को जिसका भी प्रतिरूप चाहें समझ लें," और उसने ऊँचे स्वर में कहा:

"मेहरबानी करके थोड़ी देर के लिए बैठ तो जाइये, मैं जरा इसकी नोक-पलक ठीक कर दूँ।"

---

* लाजवाब, शानदार! (फ्रांसीसी)

** कितना अच्छा विचार है! (फ्रांसीसी)

"अरे नहीं, मुझे डर लगता है कि कहीं आप... जैसी है वैसी ही बहुत अच्छी है।"

लेकिन कलाकार को ऐसा लगा कि महिलाओं को शायद पीलेपन का डर था; उसने उन्हें आश्वस्त कर दिया कि वह केवल आँखों को अधिक चमकदार और भावपूर्ण बनाना चाहता था। जबकि सच तो यह है कि वह बहुत लज्जित अनुभव कर रहा था और चाहता था कि मूल से कुछ समानता तो पैदा हो जाये, वरना लोग उसे सरासर निकम्मा कहकर उसकी निन्दा करेंगे। और सचमुच, धीरे-धीरे साइकी की आकृति में उस पीली लड़की का नाक-नक्शा पहचाना जाने लगा।

"बस, बस!" माँ ने चिल्लाकर कहा; वह डर रही थी कि तस्वीर कहीं उनकी बेटी से बहुत ज्यादा न मिलने लगे।

ईनाम में चित्रकार को सब कुछ दिया गया: मुस्कानें, पैसा, प्रशंसा के शब्द, तपाक से हाथ मिलाने का सौभाग्य और खाना खाने के लिए आने के निमन्त्रण; दूसरे शब्दों में, उसे उसका जी खुश करनेवाले हजारों पुरस्कार मिले। उस तस्वीर से शहर में तहलका मच गया। महिला ने उसे अपने मित्रों को दिखाया; वे सभी आश्चर्यचकित रह गये कि कलाकार ने कितनी दक्षता के साथ आकृति की समानता बनाये रखने के साथ ही अपने मॉडल के सौन्दर्य में एक नयी बात पैदा कर दी थी। यह बादवाला मत व्यक्त करते समय बोलनेवाले के गाल पर ईर्ष्या की लाली दौड़ जाती थी। और अचानक कलाकार पर ऑर्डरों की बौछार होने लगी। ऐसा लगता था कि सारा शहर उससे अपनी तस्वीर बनवाना चाहता था। उसके दरवाजे की घण्टी निरन्तर बजने लगी। एक तरह से यह अच्छी बात भी हो सकती थी, क्योंकि अलग-अलग चेहरों की तस्वीरें बनाने से उसे विविधता का अत्यधिक अभ्यास करने का अवसर मिलता था, लेकिन दुर्भाग्य की बात यह थी कि ये सभी उस किस्म के लोग थे, जिन्हें खुश करना बहुत मुश्किल होता है, वे तो जल्दबाज थे, बहुत व्यस्त थे यानी वे ऊँचे समाज के लोग थे—जिसका मतलब यह था कि वे दूसरों से अधिक व्यस्त थे, और इसलिए हद से ज्यादा अधीर थे। हमेशा उनका पहला तकाजा यह होता था कि तस्वीर अच्छी हो और जल्दी बने। कलाकार समझ गया था कि आदर्श स्थिति को प्राप्त करने का प्रयास त्याग देना होगा, और यह कि उसे केवल कलात्मक दक्षता और ब्रुश की सफाई से काम चलाना होगा। उसे सामान्य, आधारभूत भाव को ही पकड़ना था और अपने ब्रुश को ब्योरे की बातों का चित्रण करने की दिशा में भटकने नहीं देना था; दूसरे शब्दों में, प्रकृति का पूर्णत: यथार्थ चित्रण करना बिल्कुल असम्भव था। इसके साथ ही हम इतना और बता दें कि उसके यहाँ तस्वीर बनवाने के लिए आनेवालों के कई दूसरे तकाजे भी होते थे। महिलाओं का आग्रह होता था कि वह बाकी सब चीजों को भूलकर उनकी आत्मा और उनके चरित्र का चित्रण करे, सारे तीखे कोणों में गोलाई पैदा कर दे, सारे दोषों को किसी तरह ढक दे—या उन्हें बिल्कुल ही गायब कर दे। दूसरे शब्दों में, तस्वीर ऐसी हो जिसे आप चाव से देखते रह सकें, शायद, उससे प्यार भी करने लगें। नतीजा यह होता था कि जब वे तस्वीरें बनवाने बैठती थीं तो ऐसी मुद्रा धारण कर लेती थीं कि कलाकार बिल्कुल चकरा

जाता था: कोई अपने चेहरे पर उदासी का भाव लाने की कोशिश करती थी, तो कोई स्वप्निलता का तो कोई और अपना मुँह छोटा करने की कोशिश में उसे इतना कसकर भींच लेती थी कि वह पिन के माथे के बराबर बिन्दु बनकर रह जाता था। और इन सब बातों के बावजूद उनका तकाजा यह होता था कि जो तस्वीर वह बनाये वह उनकी सूरत से बिल्कुल मिलती-जुलती हो और उसमें स्वाभाविक सहजता हो। जो सज्जन आते थे वे भी महिलाओं से किसी तरह बेहतर नहीं थे। किसी का तकाजा यह होता कि उसकी तस्वीर ऐसी बनायी जाये जिसमें उसके सिर की मुद्रा रोबदार हो; कोई दूसरा अपनी आँखें ऊपर उठा लेता जैसे प्रेरणा प्राप्त कर रहा हो; एक तीसरे आदमी का, जो गारद का लेफ्टिनेण्ट था, तकाजा यह था कि उसकी आँखों में फौजी कठोरता हो; ऊँचे ओहदे का कोई अफसर यह चाहता था कि उसके चेहरे पर अधिक स्पष्टवादिता और कुलीनता का भाव हो और उसका हाथ एक किताब पर रखा हो जिस पर साफ पढ़े जा सकनेवाले अक्षरों में लिखा हो: ''उसने सदा न्याय का पक्ष लिया।'' शुरू में तो कलाकार को इन तकाजों से पसीना छूटता था: उसे बड़े ध्यान से इन सब बातों के बारे में सोचना पड़ता था और उसे अपना काम पूरा करने के लिए बहुत समय भी नहीं दिया जाता था। आखिरकार उसने इसका गुर सीख लिया, और उसे अब किसी समस्या का सामना नहीं करना पड़ता था। थोड़े ही से शब्दों में वह समझ जाता था कि उसका ग्राहक अपनी तस्वीर किस तरह की बनवाना चाहता है। जो लोग फौजी कठोरता चाहते थे उनके चेहरे को वह वही आकृति प्रदान कर देता था; जिनमें बायरन जैसा लगने की आकांक्षा होती उनकी मुद्रा वह बायरन जैसी बना देता। अगर महिलाएँ कोरीन्ना, उन्दीना या अस्पासिया जैसी लगना चाहतीं तो वह उनकी इन लालसाओं को पूरा करने के लिए सदा तत्पर रहता, और उनके कहे बिना ही वह उनके चेहरे के सौन्दर्य को बढ़ा देता, जिसका कोई कभी बुरा नहीं मानता और जिसके लिए कभी-कभी तो कलाकार का यह अपराध भी क्षमा कर दिया जाता है कि चित्र मूल जैसा नहीं है। शीघ्र ही उसे स्वयं अपनी तूलिका की चमत्कारी फुर्ती पर आश्चर्य होने लगा। यह तो बताने की जरूरत नहीं कि जो लोग उसके यहाँ तस्वीर बनवाने आते थे उनकी उमंगें लहरा उठती थीं और वे उसे जीनियस कहते थे।

चर्तकोव हर दृष्टि से फैशनेबुल चित्रकार बन गया। वह बाहर दावतों में जाने लगा, महिलाओं के साथ गैलरियों में और टहलने के लिए भी जाने लगा, भड़कीले कपड़े पहनने लगा और ऊँचे स्वर में आग्रह करने लगा कि कलाकार को सभ्य समाज का अंग होना चाहिये, उसे अपनी ख्याति बनाये रखना चाहिये, कि आम कलाकार मोचियों जैसे कपड़े पहनते हैं, उन्हें शिष्ट आचरण नहीं आता, वे रख-रखाव नहीं जानते और उन्हें कोई शिक्षा तो बिल्कुल मिलती ही नहीं। उसने अपने घर और स्टूडियो को साफ-सुथरा रखने का पक्का बन्दोबस्त कर लिया, दो रोबदार अर्दली रख लिये, छैला किस्म के नौजवान छात्रों को शागिर्द बना लिया, दिन में कई बार अपने कपड़े बदलने लगा, अपने बाल घुँघराले करवा लिये, मिलने आनेवालों की आवभगत करने का

शिष्टाचार अच्छी तरह सीखना शुरू कर दिया, और अपनी बाहरी सज-धज को हर तरह से निखारने में व्यस्त रहने लगा ताकि महिलाओं पर सबसे अच्छा असर पड़े; दूसरे शब्दों में, जल्दी ही उसे देखकर यह पहचानना भी असम्भव हो गया कि वह वही विनम्र कलाकार था जो किसी जमाने में दुनिया की नजरों से ओझल रहकर वसीलेव्स्की द्वीप पर अपने छोटे से फ्लैट में काम करता था। वह अब बेझिझक होकर कलाकारों और उनके काम के बारे में अपनी राय देता था; उसका मत था कि पुराने उस्तादों को बहुत बढ़ा-चढ़ाकर आँका गया है, कि रफाएल से पहले वे आदमियों के शरीर नमक लगी हेरिंग मछलियों जैसे बनाते थे; कि उनकी कृतियों के चारों ओर जो एक पवित्र प्रभा-मण्डल बना दिया गया है वह केवल सर्वधारण की कल्पना की उपज है; कि खुद रफाएल की सारी तस्वीरें इतनी अच्छी नहीं हैं और उनके कई चित्रों की लोकप्रियता का कारण केवल उनकी ख्याति का रोब है; कि माइकेल एंजेलो बड़बोला था, क्योंकि वह शरीर-रचना के बारे में अपनी जानकारी का दिखावा करना चाहता था और उसमें रत्ती-भर भी लालित्य नहीं था, और यह कि वास्तविक प्रतिभा, कलात्मक शक्ति और असली रंग तो अब जाकर, इस शताब्दी में, देखने को मिलते हैं। और मानो अनायास ही इन बातों का सिलसिला स्वयं उसकी अपनी चर्चा पर आकर टूटता था। "मेरी समझ में यह नहीं आता," वह कहा करता था, "कि लोग किसी कृति पर अनन्तकाल तक बैठकर मेहनत करते रहने पर अपने आपको कैसे मजबूर कर लेते हैं। जो आदमी एक ही तस्वीर पर महीनों मेहनत कर सकता है वह, मेरी राय में, कलाकार नहीं घसियारा होता है। मैं नहीं मानता कि उसमें कोई प्रतिभा होती है। जो जीनियस होता है वह बहुत जल्दी और बड़ी हिम्मत से चीजें बनाता है। अब इसी तस्वीर को ले लीजिये," वह अपने यहाँ आनेवालों की ओर मुड़कर कहता, "इसे मैंने दो दिन में बनाया था, यह चेहरा एक दिन में बनाया था, यह कुछ घण्टों में, और यह तो एक घण्टे से कुछ ही ज्यादा वक्त में बन गया था। जी नहीं, मैं... मैं सच कहता हूँ, मैं किसी भी ऐसी तस्वीर को कला नहीं मानता जो एक-एक लकीर करके बड़ी मेहनत से बनायी गयी हो; वह व्यवसाय होता है, कला नहीं होती।"

इस तरह वह अपने मिलनेवालों का जी खुश करता, और वे भी उसकी तूलिका की शक्ति और स्फूर्ति पर चकित रह जाते, यह सुनकर कि उसकी कौन-सी तस्वीर कितनी जल्दी बनकर तैयार हो गयी थी आश्चर्य के मारे उसके मुँह से चीख निकल जाती और वे एक-दूसरे से कहते: "इसे कहते हैं हुनर, सच्चा हुनर! जरा उसकी बातें सुनो, देखो तो उसकी आँखें कैसी चमकती हैं! Il y a quelque chose d'extraordinaire dans toute sa figure!"*

ऐसी बातें सुनकर कलाकार का जी बेहद खुश होता। जब वह पत्रिकाओं में अपनी कला की प्रशंसा-भरी आलोचना पढ़ता तो वह बच्चों की तरह झूम उठता,

---

* उसकी आकृति भी तो असाधारण है! (फ्रांसीसी)

हालाँकि यह प्रशंसा खुद उसके पैसे से खरीदी जाती थी। वह इनकी कतरनें हर वक्त अपने साथ रखता था और कोई बहाना निकालकर अपने दोस्तों और जान-पहचानवालों को दिखाता था, और वह इतना भोला था कि इससे खुश भी होता रहता था। उसकी ख्याति फैलती गयी और उसे दिन-ब-दिन ज्यादा काम मिलने लगा। वह हमेशा एक जैसी तस्वीरों और मुद्राओं से तंग आने लगा, जो अब तक उसे बिल्कुल उबा देनेवाली हो चुकी थीं। उसे उन तस्वीरों को बनाने से अधिकाधिक घृणा होती गयी, और जहाँ तक हो सकता था वह अब चेहरे का खाका बना देने से ज्यादा कुछ भी नहीं करता था और बाकी काम अपने शागिर्दों पर छोड़ देता था। पहले तो वह नयी-नयी मुद्राएँ खोजने, कोई आकर्षक और सशक्त प्रभाव पैदा करने की कोशिश भी करता था, लेकिन अब वह इससे भी उकताने लगा था। उसका दिमाग नये-नये विचार सोचकर ढूँढ़ निकालने की लगातार कोशिश से थक गया था। उसके पास न इतनी शक्ति रह गयी थी और न ही इतना वक्त था: समाज के जिस भँवर में वह फैशन की कसौटी पर खरे उतरनेवाले आदमी की भूमिका अदा करने की कोशिश कर रहा था वह उसे बहाकर काम और विचारों से अधिकाधिक दूर खींचे लिये जा रहा था। उसकी शैली बेजान और नीरस होती गयी; और वह जाने बिना ही घिसी-पिटी और सपाट आकृतियों में सीमित होकर रह गया। सरकारी और फौजी अफसरों के कठोर और फीके चेहरे-मोहरों में, जो हमेशा बहुत सजे-सँवरे होते थे और, यों समझ लीजिये, तसमों में कसे रहते थे, उसकी तूलिका को अपना चमत्कार दिखाने का बहुत मौका नहीं मिलता था: उसकी तूलिका शानदार कपड़ों, आकर्षक मुद्राओं और भावावेशों को भूलने लगी, वर्ग की विशेषताओं, कलात्मक नाटकीयता और उसके उत्कृष्ट तनाव की तो बात ही जाने दीजिये। उसे अब सिर्फ किसी वर्दी, या किसी चोली, या किसी टेलकोट से सरोकार रह गया था, जिन चीजों से कलाकार का दिमाग ठिठुरकर रह जाता है और उसकी कल्पना का दम घुट जाता है। अब उसकी तस्वीरों में मामूली से मामूली खूबियाँ भी बाकी नहीं रह गयी थीं, लेकिन फिलहाल उनकी ख्याति बनी रही, हालाँकि जो सच्चे पारखी और कलाकार थे वे उसकी नवीनतम कृतियों को देखकर बड़े अर्थपूर्ण ढंग से कन्धे बिचका देते थे। उनमें से कुछ तो, जो चर्तकोव को पुराने जमाने से जानते थे, यह नहीं समझ पाते थे कि उसने अपनी वह प्रतिभा कैसे खो दी थी जो उसके कलाकार जीवन के शुरू में ही इतनी उभरकर सामने आयी थी, और वे व्यर्थ ही इस गुत्थी को सुलझाने की कोशिश करते रहते थे कि कोई आदमी ठीक ऐसे समय अपना कोई गुण कैसे खो दे जब उसकी सारी क्षमताएँ अपने विकास के शिखर पर पहुँच गयी हों।

लेकिन नशे में चूर हमारा कलाकार इन आलोचनाओं को अनसुना करता रहा। वह शरीर और आत्मा दोनों ही की शिथिलता की अवस्था में पहुँचता जा रहा था: उसका बदन भारी होता जा रहा था और पेट निकलता आ रहा था। पत्र-पत्रिकाओं में अब उसके नाम के साथ सम्मानसूचक विशेषण जोड़े जाने लगे थे: "हमारे प्रतिष्ठित अन्द्रेई

पेत्रोविच,'' ''हमारे सुयोग्य अन्द्रेई पेत्रोविच।'' उसे सम्मानित पद दिये जाते थे, चित्रों को परखने के लिए बुलाया जाता था, समितियों का सदस्य बनाया जाता था। जैसा कि उन लोगों के साथ हमेशा होता है जो बूढ़े होने लगते हैं, वह भी अब रफाएल और पुराने उस्तादों की ओर झुकने लगा था—इसलिए नहीं कि उसे उनकी प्रतिभा का पूरी तरह यकीन हो गया था बल्कि उन्हें नौजवान कलाकारों के खिलाफ एक हथियार की तरह इस्तेमाल करने के लिए। क्योंकि जैसी कि जीवन में उसकी उमर के लोगों की आदत होती है, वह सभी नौजवानों को उनके नैतिक पतन और स्वच्छन्द विचारों के लिए लताड़ता रहता था। वह विश्वास करने लगा था कि जिन्दगी में हर चीज आसानी से मिल जाती है, कि ऊपर से आनेवाली प्रेरणा जैसी कोई चीज नहीं होती और यह कि हर चीज को मर्यादा और समरूपता की एक ही कठोर प्रणाली में अनुशासनबद्ध कर दिया जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, उसका जीवन उस अवस्था में पहुँच गया था जब हर स्वतःस्फूर्त चीज आदमी के अन्दर सिमटकर रह जाती है, जब भावात्मक आवेग आत्मा तक अधिक क्षीण रूप में पहुँचते हैं और वे हृदय को बेधनेवाले स्वरों से आन्दोलित नहीं करते, जब सौन्दर्य के साथ सम्पर्क अछूती शक्तियों को अग्नि और ज्वाला में रूपान्तरित नहीं करता, और जब भस्मीभूत चेतनाएँ सोने के सिक्कों की खनक को अधिक सहज रूप से स्वीकार करने लगती हैं, जब वह उनके मोहक संगीत पर बड़ी उत्सुकता से रीझने लगता है, और धीरे-धीरे, अनजाने ही, उसके प्रभाव से अपनी चेतनाओं को निःसंज्ञ हो जाने देता है। जिस आदमी ने छल-कपट से, योग्यता न रखते हुए भी ख्याति प्राप्त कर ली हो उसे ख्याति से कोई आनन्द नहीं मिल सकता; ख्याति तो उद्दीपन का निरन्तर स्पन्दन उसी व्यक्ति में पैदा कर सकती है, जो उसके योग्य हो। इसलिए उसकी सारी भावनाओं और उसके सारे आवेगों की दिशा सोने के सिक्कों की ओर मुड़ गयी। उसकी लगन, उसका आदर्श, उसका भय, उसका आनन्द, उसका उद्देश्य सब कुछ सोना ही था। उसकी तिजोरियों में नोटों की गड्डियाँ बढ़ती गयीं, और उन सभी लोगों की तरह जिनके भाग्य में इस भयानक निधि को प्राप्त करना बदा होता है, सोने के अलावा हर चीज के प्रति उसकी चेतना भी मन्द पड़ती गयी और संवेदनहीन होती गयी; वह बिना किसी कारण के दौलत बटोरने लगा, बिना किसी उद्देश्य के उसे जमा करने लगा; वह लगभग बिल्कुल उन लोगों जैसा होता जा रहा था, जिनकी संख्या हमारे इस निष्प्राण जगत में इतनी अधिक हो गयी है, जिनको जीवन और भावना से भरपूर लोग घृणा से देखते हैं, जिनको वे पत्थर के बने हुए चलते-फिरते ताबूतों जैसे लगते हैं, जिनके अन्दर हृदय के स्थान पर एक मुर्दा होता है। लेकिन तभी एक ऐसी बात हुई जिसने उसे झँझोड़कर फिर उसकी आँखें खोल दीं।

एक दिन उसे अपनी मेज पर एक पत्र मिला जिसमें कला अकादमी ने उससे अनुरोध किया था कि वह उसके एक प्रतिष्ठित सदस्य की हैसियत से आकर एक नयी तस्वीर के बारे में अपनी राय दे, जो इटली में काम सीखनेवाले एक रूसी कलाकार ने

वहाँ से भेजी थी। यह कलाकार पहले उसका दोस्त रह चुका था, जिसके मन में बहुत छोटी उम्र से ही कला का बड़ा चाव था, जो एक सच्चे सेवक की लगन के साथ तन-मन से उसमें लीन हो गया था, अपने परिवारवालों, दोस्तों और प्रिय रुचियों से नाता तोड़कर वह भव्य आकाशों से आच्छादित कलाओं की उस मनोरम द्राक्ष-वाटिका की ओर, रोम के उस चमत्कारपूर्ण नगर की ओर चल पड़ा था, जिसके नाम से ही कलाकार के उत्साह-भरे हृदय में हिलोरें उठने लगती हैं। वहाँ वह तपस्वी की तरह परिश्रम में लीन हो गया, और किसी भी चीज से उसने अपनी साधना भंग नहीं होने दी। उसे इस बात की तनिक भी चिन्ता नहीं थी कि उसके चरित्र के बारे में, उसके फूहड़पन के बारे में, उसकी सामाजिक शिष्टाचार की अनभिज्ञता के बारे में, या उसके फटे-पुराने मैले-कुचैले कपड़ों से कला-जगत की जो बदनामी होती थी उसके बारे में लोग क्या सोचते थे। उसे इसकी रत्ती-भर भी परवाह नहीं थी कि उसके साथी उस पर झुँझलाते होंगे। हर चीज को त्यागकर वह कला को समर्पित हो गया। वह चित्रकला की गैलरियों में जाता, बड़े-बड़े उस्तादों की बनायी हुई तस्वीरों के सामने घण्टों चुपचाप खड़ा उनकी तूलिका के चमत्कार का अध्ययन और विश्लेषण करता रहता। वह अपनी कोई तस्वीर उस समय तक पूरी न करता जब तक वह इन महान शिक्षकों की उपलब्धियों से उसकी तुलना करके उसके गुण-अवगुण देख न लेता और जब तक वह उनकी अमर कृतियों में से यह न खोज निकालता कि उनमें उसके लिए कौन-से अनकहे लेकिन अर्थपूर्ण निर्देश निहित थे। वह कभी चिल्ला-चिल्लाकर की जानेवाली बहसों और तकरारों में नहीं उलझता था; वह शुद्धतावादियों का न समर्थन करता था न उनकी निन्दा। वह हर चीज को उसका उचित श्रेय देता था, और उसमें से केवल वही ग्रहण करता था जो सुन्दर होता था, और अन्ततः उसने उनमें से केवल एक चित्रकार को, देवतुल्य रफाएल को अपने शिक्षक के रूप में स्वीकार कर लिया, ठीक उसी तरह जैसे उस महान कवि-चित्रकार ने भव्य वैभव तथा सौन्दर्य से परिपूर्ण अनेक महान कृतियाँ पढ़ने के बाद अन्त में केवल एक पुस्तक अपने पास रखी थी, होमर की 'इलियड', क्योंकि वह इस निष्कर्ष पर पहुँच गया था कि उसमें वह सब कुछ था जिसकी किसी को जरूरत हो सकती है, और यह कि किसी भी दूसरी कृति में कोई चीज ऐसी नहीं थी जो उसमें अनूठे निर्विकार रूप में प्रतिबिम्बित न हुई हो। इस प्रकार उसने अपनी इस शिक्षा से सृष्टि की उदात्त कल्पना, विचार का प्रबल सौन्दर्य और उसकी दिव्य तूलिका का भव्य आकर्षण ग्रहण किया।

हॉल में प्रवेश करने पर चर्तकोव ने देखा कि उस तस्वीर के सामने दर्शकों की काफी बड़ी भीड़ जमा हो चुकी थी। वे गहरी चुप्पी साधे हुए थे, जैसा कि पारखियों के ऐसे जमाव में बहुत कम होता है। उसने जल्दी से अपने आपको बहुत महत्वपूर्ण समझनेवाले विशेषज्ञ की मुद्रा बनायी और बढ़कर तस्वीर के पास चला गया—लेकिन, हे भगवान, वहाँ उसने क्या देखा!

उसके सामने एक तस्वीर टँगी थी, नयी-नवेली दुल्हन जैसी शुद्ध, सुन्दर और पवित्र। चित्रकार की कृति विनम्र, दिव्य, निश्छल तथा सहज भाव से शुद्ध मेधावी प्रतिभा की तरह हर चीज से ऊपर उठ गयी थी। ऐसा लगता था कि जैसे चित्र में अंकित दिव्य आकृतियाँ इस बात से घबरा उठी हों कि इतनी बहुत-सी आँखें उन्हें घूर रही थीं, और उन्होंने शरमाकर अपनी सुन्दर पलकें झुका ली हों। कला-पारखी उस नये चित्रकार की तूलिका की चमत्कारी शक्ति देखकर दंग रह गये थे। ऐसा लगता था कि उस चित्र में सभी कुछ था: उदात्त मुद्राओं में प्रतिबिम्बित रफाएल की प्रतिध्वनि; तूलिका की चमत्कारी दक्षता में कार्रेजियो की प्रतिध्वनि। लेकिन सबसे अधिक प्रभावित करती थी चित्र में वह सृजन-शक्ति जो कलाकार की आत्मा में शामिल थी। वह चित्र की छोटी-से-छोटी ब्योरे की बातों में व्याप्त थी, और हर जगह सन्तुलन और आन्तरिक शक्ति दिखायी देती थी। चित्रकार ने रेखाओं का वह द्रवित होता हुआ प्रवाहमय सुडौलपन अपनी तूलिका के वश में कर लिया था जिसे प्रकृति में केवल सच्चे कलाकार की दृष्टि ही देख सकती है और जिसे घटिया चित्रकार नुकीला बना देता है। यह स्पष्ट था कि चित्रकार बाह्य जगत की जिस चीज को भी अंकित करता था उसे पहले वह अपनी आत्मा में समो लेता था, जहाँ से वह सुमधुर और विजयोल्लास से ओत-प्रोत गीत की तरह ऐसे उमड़कर बाहर आती थी जैसे वह आत्मा के किसी जलस्रोत से फूटी पड़ रही हो। अनजान से अनजान आदमी को भी यह बात साफ दिखायी देती थी कि सच्ची कलात्मक कृति और प्रकृति के प्रतिरूप के चित्रण मात्र में कितना बड़ा अन्तर होता है। उस चित्र को मन्त्रमुग्ध होकर देखनेवालों पर एक अकथनीय स्तब्धता छायी हुई थी, जरा-सी भी कोई सरसराहट या कोई शब्द बोले जाने की आवाज नहीं सुनायी दे रही थी, और प्रति क्षण वह चित्र और भी ऊँचा उठता हुआ प्रतीत हो रहा था; ऐसा लग रहा था कि वह अपने आपको आस-पास की हर चीज से अलग किये ले रहा है और निरन्तर अधिक ज्योतिर्मय तथा उत्कृष्ट होता हुआ वह सहसा एक ऐसे क्षण के रूप में परिवर्तित हो गया था, जो दिव्य प्रेरणा का फल था, उस क्षण के रूप में जिसके लिए मनुष्य का सारा जीवन केवल एक तैयारी के समान होता है। दर्शकों ने महसूस किया कि उनकी आँखों से आँसू छलकते आ रहे हैं। ऐसा प्रतीत होता था कि सभी रुचियाँ, सुरुचियों के पथ से बिखरे हुए और गुमराह सभी भटकाव एक में घुल-मिल गये थे और उन्होंने इस दिव्य कलाकृति की वन्दना में एक मूक स्तुति का रूप धारण कर लिया था। चर्तकोव मुँह बाये चित्र के सामने मूर्तिवत् खड़ा रहा, और अन्ततः जब दूसरे दर्शकों और पारखियों ने धीरे-धीरे अपनी स्तब्धता से मुक्त होकर उस चित्र के गुणों की विवेचना शुरू की तो वह भी चौंक पड़ा; वह अपने भावों को उदासीनता की सामान्य मुद्रा में व्यवस्थित कर लेना चाहता था और इस तरह के घिसे-पिटे कलाकारों की आदत के अनुसार कुछ इस ढंग की बातें कहकर उस चित्र को चुटकियों में उड़ा देना चाहता था: "अलबत्ता, इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि कलाकार में प्रतिभा है; उसमें

कुछ बात है; यह तो दिखायी देता है कि वह किसी बात को व्यक्त करना चाहता है; लेकिन जहाँ तक बुनियादी बात का सवाल है..." और इसके बाद वह प्रशंसा के कुछ उस प्रकार के क्षीण शब्द भी जोड़ देना चाहता था जो किसी भी कलाकार को ध्वस्त कर देने के लिए काफी होते हैं। वह इस तरह की कोई प्रशंसा करना चाहता था, लेकिन शब्दों ने उसका साथ न दिया, और जवाब देने के बजाय वह फूट-फूटकर रोने लगा और पागल की तरह झपटकर कमरे से बाहर निकल गया।

घर वापस पहुँचकर वह अपने शानदार स्टूडियों में निश्चल और निश्चेत खड़ा रहा। उसका सारा अस्तित्व, उसका जीवन फिर से जागृत हो गया था, मानो उसकी जवानी फिर से लौट आयी हो, मानो उसकी प्रतिभा की बुझी हुई चिंगारियाँ फिर से भड़क उठी हों। सहसा उसकी आँखों पर से पट्टी उतर गयी। हे भगवान! उसने अपनी जवानी के सबसे अच्छे वर्ष बड़ी निर्ममता से लुटा दिये थे; उस चिंगारी को नष्ट कर दिया था, बुझा दिया था जो शायद उसके सीने में सुलग रही थी, उस चिंगारी को जो शायद अब तक अपने समस्त गौरव और वैभव के साथ प्रज्वलित हो चुकी होती, और शायद वह भी दूसरों को विस्मय और कृतज्ञता के भाव से रो पड़ने पर मजबूर कर देती! यह सब कुछ नष्ट कर दिया गया था और तनिक भी अनुताप के बिना नष्ट कर दिया गया था! उस क्षण एक बार फिर उसने उत्तेजना और उत्कण्ठा की वही लहर उमड़ती हुई महसूस की जिससे वह किसी जमाने में इतनी अच्छी तरह परिचित था। उसने ब्रुश उठा लिया और बढ़कर कैनवस के पास तक गया। तनाव के कारण उसके माथे पर पसीने की बूँदें छलक आयीं; उसका सारा अस्तित्व एक विचार की ज्वाला से धधक-सा उठा था: एक पतित फरिश्ते की तस्वीर बनाना। यह विचार उसकी मनोदशा के सबसे अधिक अनुरूप प्रतीत होता था। परन्तु, हाय दुर्भाग्य! उसकी आकृतियाँ, मुद्राएँ, बिम्ब-संयोजन और कल्पनाएँ चित्र में उतरने के बाद जबर्दस्ती थोपी हुई और उखड़ी-उखड़ी लगती थीं। उसकी शैली और कल्पना बहुत समय से एक लीक में फँसी थी और सीमाओं को तोड़ निकलने और अपने ही हाथों पहनायी हुई जंजीरों को उतार फेंकने की यह आकांक्षा अशक्त सिद्ध हुई, उसमें खोट और खोखलेपन की खनक थी। वह प्राथमिक ज्ञान प्राप्त करने के और भावी महानता प्राप्त करने के बुनियादी नियमों को जानने के लम्बे और चक्करदार दुर्गम मार्ग की उपेक्षा करता आया था। उसे झुँझलाहट ने आ दबोचा। उसने अपनी हाल की सभी कृतियों को, अपनी सभी निर्जीव, फैशनेबुल तस्वीरों को, हुसारों, भद्र महिलाओं और स्टेट काउन्सिलरों की सभी पोर्ट्रेटों को अपने स्टूडियो से हटवा दिया। फिर उसने अपने आपको कमरे में बन्द कर लिया और यह आदेश देकर कि किसी को अन्दर न आने दिया जाये वह काम में जुट गया। वह धैर्यवान नवयुवक की तरह, एक नौजवान प्रशिक्षार्थी की तरह बैठकर काम करता रहा। लेकिन उसके परिश्रम का कोई भी फल ऐसा नहीं था जिससे उसे सन्तोष मिलता! हर कदम पर सबसे आधारभूत तत्वों की जानकारी का अभाव उसे रोक देता था; उसका सारा उत्साह अपने ही विकसित किये हुए उन साधारण और खोखले कौशलों से टकराकर चकनाचूर

हो जाता था, जो उसकी कल्पना के मार्ग में एक अलंघ्य बाधा बन गये थे। उसकी तूलिका अनायास ही घिसी - पिटी आकृतियों के चित्रण की ओर मुड़ जाती थी, बाँहें उसी अस्वाभाविक ढंग से बँधी हुई थीं, सिर किसी भी अपरिचित ढंग से मुड़ने में असमर्थ रहा, कपड़ों की सिलवटें भी लकड़ी की तरह जड़ थीं और चित्रकार की इच्छा के अनुसार अपने आपको बदलने से इन्कार करती थीं, वे शरीर की अपरिचित मुद्रा को सहज भाव से आच्छादित करने से इन्कार करती थीं। यह सब कुछ वह स्वयं देख रहा था और महसूस कर रहा था!

"लेकिन क्या मुझमें सचमुच कभी कोई प्रतिभा थी?" अन्ततः उसने अपने आप से पूछा। "क्या मैं अपने आपको भ्रम में नहीं रख रहा था?" ये शब्द कहकर उसने अपनी वे शुरू की कलाकृतियाँ खोज निकालीं जिन पर उसने भीड़ से दूर रहकर, समृद्धि से और जीवन की चंचलताओं से दूर रहकर सबसे अलग-अलग वसीलेव्स्की द्वीप के अपने उस छोटे-से फ्लैट में इतनी शुद्ध लगन से, किसी से कोई फायदा उठाये बिना किसी जमाने में काम किया था। वह अब उनके पास गया और उनमें से हर एक को बड़े ध्यान से जाँचने लगा; उसके पुराने दरिद्रताग्रस्त जीवन की आकृतियाँ उसकी याद में उभरने लगीं। "हाँ," उसने घोर निराशा में डूबकर फैसला किया, "निश्चित रूप से मुझमें प्रतिभा थी। उसके चिह्न हर जगह दिखायी देते हैं... "

वहाँ खड़े-खड़े वह सिर से पाँव तक सिहर उठा: उसकी आँखें दो और आँखों से मिलीं जो उसे एकटक घूर रही थीं। यह वही विचित्र तस्वीर थी जो उसने श्चुकिन की दुकान में खरीदी थी। अब वह वह दूसरी तस्वीरों के पीछे ढकी हुई पड़ी थी और उसे उसकी बिल्कुल याद ही नहीं रह गयी थी। जब उसने अपने स्टूडियो में अटी हुई सारी फैशनेबुल तस्वीरों और पोर्ट्रेटों को हटाया था तो वह अब, मानो किसी योजना के अनुसार, उसकी जवानी की दूसरी कृतियों के साथ फिर निकल आयी थी। उसके विचित्र इतिहास को याद करके उसने महसूस किया कि एक तरह से यह विचित्र तस्वीर उसके अन्दर होनेवाले इतने बड़े परिवर्तन का कारण थी, कि वह दौलत जो उसे इतने चमत्कारी ढंग से मिल गयी थी उसी ने उसको सारी बेकार की लालसाओं की दिशा में भटकाया था और इस प्रकार उसकी प्रतिभा को नष्ट कर दिया था; उसने महसूस किया कि उसकी आत्मा में रोष भरता जा रहा है। उसने फौरन हुक्म दिया कि उस घृणित चित्र को तुरन्त वहाँ से हटा दिया जाये। लेकिन इससे उसकी उद्विग्न आत्मा को कोई शान्ति नहीं मिली: उसकी सारी भावनाएँ और उसका सारा अस्तित्व जड़ तक हिल गया था, और उसने वह भयावह यातना अनुभव की जो कभी-कभी और असाधारण रूप से प्रकृति में उस समय अभिव्यक्त होती है जब कोई निम्न स्तर की प्रतिभा अपनी मर्यादा से आगे बढ़ने की कोशिश करती है और उसे अभिव्यक्ति नहीं मिल पाती, यह यातना जो एक नौजवान आदमी को तो महान उपलब्धियों की ओर ले जा सकती है, लेकिन एक ऐसे आदमी में जो अपने स्वप्नों की अन्तिम सीमाओं तक पहुँच गया हो वह केवल कभी न बुझ सकनेवाली प्यास ही बनकर रह जाती है,

एक ऐसी असह्य पीड़ा जो मनुष्य में भयानक कुकृत्यों की क्षमता पैदा कर देती है। उसके मन में ईर्ष्या, भयानक ईर्ष्या उभर आयी। जब भी वह कोई ऐसी तस्वीर देखता। जिस पर प्रतिभा की छाप होती तो उसका खून खौल उठता। वह अपने दाँत पीसने लगता और अपनी विष-भरी आग्नेय दृष्टि से उसे झुलस देता। उसकी आत्मा में मनुष्य की सबसे नारकीय इच्छा उत्पन्न हुई और वह उन्मत्त होकर उस इच्छा को पूरा करने में जुट गया। वह उन सारी कलाकृतियों को खरीदने लगा जिनमें प्रतिभा की तनिक भी झलक थी। बहुत कीमत देकर कोई तस्वीर खरीदने के बाद वह बहुत सँभालकर उसे अपने कमरे में ले जाता और उस पर बिफरे हुए शेर की तरह टूट पड़ता, उसे चीर-फाड़ डालता, उसके टुकड़े-टुकड़े करके उसे पाँवों तले रौंदता, और यह सब कुछ करते समय खुशी से चिल्ला-चिल्लाकर हँसता। उसने जो अकूत दौलत जमा कर रखी थी उसके बल पर वह अपनी इस पैशाचिक लालसा को पूरा कर सकता था। उसने अपनी सोने की सारी थैलियाँ और अपने खजाने की सारी तिजोरियाँ खोल दीं। इससे पहले अज्ञान के किसी दानव ने भी इतनी सुन्दर कलाकृतियाँ नष्ट नहीं की होंगी जितनी कि उसने प्रतिशोध के अपने इस उन्मत्त प्रयास में नष्ट कर डालीं। जब भी वह किसी नीलाम में पहुँच जाता तो कोई दूसरा ग्राहक कोई कलाकृति खरीदने की बात सोच भी नहीं सकता था। ऐसा लगता था कि क्रोधोन्मत्त दैव ने स्वयं इस भयानक अभिशाप को पृथ्वी पर उसका समस्त सामंजस्य छीन लेने के लिए भेज दिया था। इस भयानक उन्माद के कारण उसकी पूरी मुद्रा विकृत हो गयी: उसका चेहरा निरन्तर ईर्ष्याग्रस्त रहने लगा। उसके एक-एक भाव पर संसार से घृणा और जीवन को नकारने का भाव था। वह साकार उस पिशाच जैसा था जिसका चित्रण पुश्किन ने अनूठे ढंग से किया है। उसके होंठों से जहर में बुझे शब्दों और निरन्तर निन्दा के अतिरिक्त कोई बात नहीं निकलती थी। वह सड़क पर मिल जाता तो ऐसा लगता कि किसी राक्षस से साक्षात हो गया हो; उसके दोस्त तक उसे दूर से ही देखकर मुँह फेर लेते थे और उससे मिलने से कतराते थे, और कहते थे कि उससे मुलाकात हो जाने पर उनका सारा दिन तबाह हो जाता।

कला के लिए और सारी दुनिया के लिए यह सौभाग्य की बात थी कि अस्वाभाविक तनाव के इस स्तर पर बिताया जानेवाला जीवन बहुत दिन तक नहीं चलता रह सकता था: उसके उन्माद का फैलाव इतना विशाल और असन्तुलित था कि उसकी क्षीण शक्ति उसका भार वहन नहीं कर सकती थी। उन्माद के दौरों ने भयानक रोग का रूप ग्रहण कर लिया। वह तेज बुखार और तीव्र गति से बढ़नेवाले क्षय रोग के ऐसे भीषण संयोग से ग्रस्त हुआ कि तीन दिन तक इस हालत में रहने के बाद ही वह सूखकर बिल्कुल काँटा हो गया। इसके साथ ही असाध्य पागलपन के भी सारे चिह्न दिखायी देने लगे। कभी-कभी तो ऐसा होता कि कई आदमी मिलकर भी उसे काबू में रखने में असमर्थ रहते थे। वह अपनी कल्पना की दृष्टि से उस विलक्षण चित्र की

जीती-जागती आँखों को देखने लगा था जिन्हें वह न जाने कब का भूल चुका था, और ऐसे क्षणों में उसका क्रोधोन्माद भयानक होता था। अपने पलंग के चारों ओर खड़े हुए सारे लोग उसे भयानक तस्वीरों जैसे दिखायी देते थे। उसे उस चित्र के दो-दो, चार-चार प्रतिरूप दिखायी देने लगे थे: ऐसा लगता था कि उसकी सभी दीवारों पर ऐसी तस्वीरें टँगी हुई थीं जिनकी जीती-जागती एक जगह पर जमी हुई आँखें उसे बेधती रहती थीं। पैशाचिक चित्र उसे छत पर से, फर्श पर से घूरते रहते थे; कमरा खिंचकर और फैलकर अनन्त के छोर तक चला गया था, ताकि वे जमी हुई आँखें अधिक से अधिक संख्या में उसमें समा सकें। जिस डाक्टर ने उसका इलाज करने की जिम्मेदारी ली थी और जो उसके विचित्र जीवन-वृत्त से कुछ हद तक परिचित भी हो चुका था, उसने उसके मतिभ्रमों और उसके जीवन की घटनाओं के आधारभूत पारस्परिक सम्बन्ध का पता लगाने की भरपूर कोशिश की, लेकिन उसे कोई सफलता न मिल सकी। रोगी अपनी यातनाओं को छोड़कर न कुछ समझता था न महसूस करता था, और वह केवल भयानक चीखें मारता रहता था और बड़बड़ करता रहता था जो किसी की समझ में नहीं आती थी। आखिरकार पीड़ा की एक अन्तिम मूक लहर उठी और उसकी जीवन-लीला समाप्त हो गयी। उसका शव भी देखने में भयानक लगता था। उसकी अपार सम्पदा में से कुछ भी न मिल सका; लेकिन जब लोगों ने उन महान कलाकृतियों के फटे हुए टुकड़े देखे जिन्हें उसने करोड़ों की रकम लगाकर खरीदा था तब उसकी समझ में आया कि इस धन-सम्पदा का कैसा भयानक दुरुपयोग किया गया था।

भाग 2

बहुत-सी गाड़ियाँ, बग्घियाँ और बन्द घोड़ागाड़ियाँ एक मकान के फाटक के सामने खड़ी थीं जिसमें उस प्रकार के महान कला-प्रेमियों में से एक की जायदाद का नीलाम हो रहा था, जो जीवन-भर जेफायर और क्यूपिड की अपनी तस्वीरों के बीच चैन की नींद सोते रहते हैं, और अपने मितव्ययी बाप की संचित की हुई या पहले कभी किये गये स्वयं अपने श्रम से जोड़ी हुई करोड़ों की दौलत चित्रों पर लुटाकर अनजाने ही कलाओं के संरक्षक होने की ख्याति अर्जित करते रहते हैं। इन संरक्षकों की नस्ल का तो अब लोप हो गया है, और हमारी उन्नीसवीं शताब्दी ने उस महाजन की उकता देनेवाली आकृति को अपना लिया है जिसे केवल कागज पर लिखे हुए आँकड़ों की शक्ल में अपनी करोड़ों की दौलत से सुख मिलता है। लम्बे-से हॉल में भाँति-भाँति के लोगों की भीड़ जमा हो गयी थी, जिस तरह लाश पर गिद्ध टूटकर आते हैं। उनमें बड़ी दुकानों के और यहाँ तक कि गुदड़ी बाजार के भी रूसी सौदागरों का एक गिरोह गहरे नीले रंग के अपने जर्मन कोट पहने वहाँ मौजूद था। ऐसे माहौल में उनकी सूरत-शक्ल और उनका हाव-भाव न जाने क्यों कुछ ज्यादा निश्चिन्त और शान्त हो जाता था, और वे ताबेदारी का वह चापलूसी-भरा भाव त्याग देते थे जो कि अपनी दुकान में ग्राहक को माल दिखाते वक्त असली रूसी सौदागर के स्वभाव की खास पहचान होती है। यहाँ उनके आचरण में कोई चापलूसी बाकी नहीं रह गयी थी, हालाँकि उसी कमरे में कई ऐसे खानदानी रईस भी खड़े थे जिनके सामने उन्हें किसी दूसरी जगह में यों झुकने और नाक रगड़ने में कोई संकोच न होता। यहाँ वे हर बन्धन से मुक्त थे और बड़ी बेतकल्लुफी से किताबों और तस्वीरों को छू-छूकर और टटोल-टटोलकर उनकी मजबूती का अंदाजा लगाने की उत्सुकता व्यक्त कर रहे थे, और बेधड़क होकर उपाधियों से विभूषित अपने विरोधियों की टक्कर पर बोली लगा रहे थे। वहाँ हर नीलाम में जानेवाले बहुत-से ऐसे लोग भी थे जो रोज नाश्ता करने के बजाय किसी न किसी नीलाम में जरूर जाते हैं; वहाँ ऐसे रईस पारखी भी थे, जो अपने संग्रहों में वृद्धि करने का कोई भी अवसर न चूकने को अपना कर्त्तव्य समझते हैं और जिनके पास बारह और एक बजे के बीच करने को इससे बेहतर कोई काम नहीं होता; और फिर वहाँ तार-तार कपड़ों और खाली जेबोंवाले वे शरीफ लोग भी थे जो धन के लाभ के किसी विचार की प्रेरणा के बिना ही रोज ऐसी जगहों पर पहुँच जाते हैं, जिनका एकमात्र उद्देश्य यह देखना होता है कि आखिर में क्या हुआ, किसने सबसे ज्यादा कीमत चुकायी, किसने सबसे कम चुकायी, किसने किससे बढ़कर बोली लगायी और किसे क्या मिला। बहुत-सी तस्वीरें इधर-उधर बिखरी पड़ी थीं; उन्हीं के बीच कुछ फर्नीचर की चीजें और ऐसी किताबें थीं जिन पर उनके पिछले मालिकों के नामों की चिप्पियाँ चिपकी हुई थीं,

जिनके बारे में यह सन्देह किया जा सकता है कि उन्हें वह सराहनीय जिज्ञासा छू भी नहीं गयी थी जो उन्हें उन किताबों की विषय-वस्तु की जानकारी प्राप्त करने को प्रेरित करती। चीनी गुलदान, मेजों के लिए संगमरमर के पटरे, नयी और पुरानी कमान की तरह झुकी हुई टाँगोंवाली मेज-कुर्सियाँ जिनके पाये सजावट के लिए उकाब, नरसिंहोंवाली आकृतियों और शेर के पंजों की शक्ल के बने थे, जिनमें से कुछ पर सुनहरी पालिश की हुई थी और कुछ पर नहीं, फानूस, तेल से जलनेवाले लैम्प—यह सब कुछ अस्त-व्यस्त ढेरों में इधर-उधर पड़ा था और उनमें कोई उस प्रकार की व्यवस्था दिखायी नहीं देती थी जैसी कि दुकानों में पायी जाती है। देखनेवालों को वहाँ कलाओं का एक गड्ड-मड्ड ढेर ही दिखायी देता था। आमतौर पर नीलामों को देखकर हमारे मन में उदासी की भावनाएँ जागृत होती हैं: वहाँ की हर चीज में जनाजे की बू बसी होती है। जिन बड़े-बड़े कमरों में ये नीलाम होते हैं उनमें हमेशा अँधेरा रहता है; खिड़कियों में फर्नीचर और तस्वीरों का ढेर अटा रहने की वजह से उनसे बहुत ही थोड़ी रोशनी आती है; वहाँ लोगों के निस्तब्ध चेहरों और नीलाम करनेवाले की मातमी आवाज का विचित्र साक्षात होता है, जो हथौड़ी की चोट से बोली बन्द करके अभागी कलाकृतियों का मरसिया सुनाता है। इन सब बातों के मिलने से ऐसे अवसरों पर उत्पन्न होनेवाला भयावह वातावरण और भी भयावह हो उठता है।

ऐसा लग रहा था कि नीलाम पूरे जोर पर था। बहुत-से प्रतिष्ठित लोग झुण्ड बाँधकर आगे बढ़ आये थे और उत्तेजित होकर बोली लगा रहे थे। चारों ओर "एक रूबल, एक रूबल, एक रूबल" की आवाजें सुनायी दे रही थीं, और इससे पहले कि नीलाम करनेवाले को भीड़ की ओर से लगायी जानेवाली बोलियों को दोहराने का समय मिल पाता, वे शुरू की कीमत से चार गुनी बढ़ चुकती थीं। भीड़ एक ऐसी तस्वीर के लिए बोली लगा रही थी जो चित्रकला की तनिक भी समझ रखनेवाले को प्रभावित किये बिना नहीं रह सकती थी। उसमें सशक्त प्रतिभा स्पष्ट रूप से प्रदर्शित हो रही थी। साफ लग रहा था कि उस तस्वीर को कई बार सँवारा-सुधारा गया था और उसमें ढीला-ढाला लबादा पहने हुए किसी एशियाई आदमी के साँवले चेहरे का चित्रण किया गया था जिस पर अत्यन्त विचित्र और असाधारण भाव था, लेकिन जो बात दर्शक को सबसे अधिक प्रभावित करती थी वह थी उस तस्वीर की बिल्कुल जिन्दा आदमी जैसी आँखें। आप उन्हें जितनी ज्यादा देर तक देखते थे वे आपको उतना ही अधिक बेधती चली जाती थीं। वहाँ पर मौजूद लगभग सभी लोग उसके इस विचित्र गुण से, तैल-चित्रकला के इस चमत्कार से मन्त्रमुग्ध हो गये थे। कई लोगों ने तो बोली लगाना बन्द भी कर दिया था क्योंकि वह बेहद बड़ी रकम तक पहुँच गयी थी। बस दो नामी रईस और कला-प्रेमी ही बच गये थे, जो दोनों ही हर कीमत पर उस तस्वीर को अपनाने पर तुले हुए थे। उनका जोश बढ़ता जा रहा था और उन्होंने उसकी कीमत तर्क की सभी सीमाओं के पार पहुँचा दी होती, अगर अचानक एक दर्शक ने बीच में यह घोषणा न कर दी होती:

"एक क्षण के लिए मुझे बोली लगाने के इस सिलसिले में विघ्न डालने की इजाजत दीजिये। क्योंकि इस तस्वीर को पाने का शायद जितना अधिकार मुझे है उतना किसी और को नहीं।"

सहसा सबका ध्यान ये शब्द कहनेवाले पर केन्द्रित हो गया। वह लम्बे-लम्बे काले घुँघराले बालोंवाला लगभग पैंतीस साल का एक दुबला-पतला आदमी था। बेफिक्री की चमक से खिला हुआ उसका आकर्षक चेहरा एक ऐसी आत्मा का परिचय देता था जो इस संसार के अहंकार से बिल्कुल अपरिचित थी; उसके कपड़ों से तनिक भी फैशन का संकेत नहीं मिलता था: उसकी हर चीज पुकार-पुकारकर उसके कलाकार होने का प्रमाण देती थी। और सचमुच वह था भी कलाकार ब० ही, जिसे वहाँ पर मौजूद बहुत-से लोग निजी तौर पर जानते थे।

"आप लोग सोचते होंगे कि मैं जो कुछ कह रहा हूँ वह बहुत अजीब बात है," उसने सभी लोगों का ध्यान अपने ऊपर केन्द्रित देखकर कहा, "लेकिन अगर आप लोग मेहरबानी करके मेरी दास्तान सुन लें तो शायद आपकी समझ में आ जायेगा कि मैंने जो कुछ कहा वह बिल्कुल ठीक है। सभी संकेतों से मुझे यकीन हो गया है कि यह वही तस्वीर है जिसे मैं खोज रहा था।"

वहाँ पर मौजूद सभी लोगों के चेहरे बिल्कुल स्वाभाविक जिज्ञासा से प्रज्वलित हो उठे, और नीलाम करनेवाला भी अपनी हथौड़ी हवा में ऊपर उठाये मुँह खोले जहाँ का तहाँ खड़ा रह गया, और उसकी बात सुनने को तैयार हुआ। किस्से के शुरू में उनमें से कई लोग बार-बार तस्वीर की ओर नजरें फेरकर देखते रहे लेकिन जैसे-जैसे उसका किस्सा ज्यादा दिलचस्प होता गया सारी नजरें किस्सा बयान करनेवाले पर केन्द्रित होती गयीं।

"आप सब लोग शहर के उस हिस्से को जानते हैं जिसे कोलोम्ना कहते हैं।" इस तरह उसने अपना वृत्तान्त शुरू किया। "वहाँ की हर चीज सेण्ट पीटर्सबर्ग के दूसरे हिस्सों से अलग है; वह न राजधानी है, न छोटा कस्बा; कोलोम्ना की सड़कों पर कदम रखते ही आपको ऐसा लगता है कि आपकी सारी युवा इच्छाएँ और आपका उत्साह आपका साथ छोड़ रहा है। वहाँ भविष्य कभी कदम नहीं रखता, वहाँ शान्ति और विरक्ति का राज रहता है, राजधानी की सारी तलछट को वहाँ शरण मिल जाती है। वहाँ जाकर जो लोग बसते हैं उनमें आपको मिलेंगे रिटायर्ड सरकारी नौकर, विधवाएँ, मामूली हैसियत के लोग जिनकी सीनेट में जान-पहचान है और इसलिए उन्होंने लगभग अपना सारी जीवन वहाँ बिताने की लानत अपने सिर ले ली है; ऐसे बावर्ची जो नौकरी से रिटायर हो जाने के बाद तमाम दिन बाजार में घूमने-फिरने, अपने पड़ोस की दुकान के दरबान से गप लड़ाने और रोज की बँधी हुई पाँच कोपेक की कॉफी और चार कोपेक की शकर खरीदने में बिता देते हैं, और फिर अन्त में उन लोगों का पूरा वर्ग जिन्हें सुरमई के विशेषण से पूरी तरह बयान किया जा सकता है, वे लोग जिनका पहनावा, जिनके चेहरे, बाल और आँखें उस दिन की तरह फीके सुरमई रंग के होते हैं, जब आसमान पर न तूफान के बादल होते हैं न सूरज होता है, बल्कि कोई ऐसी चीज होती है जिसे

सही-सही बयान नहीं किया जा सकता: कुहरा-सा छा जाता है और हर चीज की रूपरेखा को धूमिल कर देता है। उन लोगों की सूची में हम रिटायर्ड थिएटर चलानेवालों, रिटायर्ड टाइटुलर काउन्सिलरों, बाहर को निकली पड़ रही आँखों और जख्म के निशान लगे हुए होठोंवाले युद्ध के पुराने सूरमाओं को भी जोड़ सकते हैं। ये लोग बिल्कुल भावशून्य होते हैं: चलते वक्त वे न किसी तरफ देखते हैं, न कुछ बोलते हैं, न सोचते। उनके कमरों में आपको सामान के नाम पर ज्यादा कुछ नहीं मिलेगा; मुमकिन है वहाँ आपको एक बोतल खालिस रूसी वोद्का के अलावा कुछ भी न मिले, जिसे वे दिन-भर यन्त्रवत् घूँट-घूँट करके पीते रहते हैं और उन्हें कभी यह महसूस नहीं होता कि खून उनके दिमाग को चढ़ता जा रहा है, जिसका आनन्द नौजवान जर्मन दस्तकार लेते हैं जो उसकी अधिक तगड़ी खुराक लेना पसन्द करते हैं, और सो भी उस वक्त जब मेश्चांस्काया स्ट्रीट के ये बड़े आदमी इतवार की अपनी भरपूर शराबखोरी के बाद आधी रात के बाद सड़क के किनारे की पटरियों पर अकेले चहलकदमी कर रहे होते हैं।

''कोलोम्ना की जिन्दगी में बेहद अकेलापन है: घोड़ागाड़ी तो वहाँ कभी-कभार ही दिखायी देती है; शायद कभी आपको कोई भूली-भटकी गाड़ी अभिनेताओं को ले जाती हुई और अपनी गड़गड़ाहट और खटर-पटर से वहाँ की चारों ओर की शान्ति को भंग करती हुई दिखायी पड़ जाये। यहाँ पैदल चलनेवालों का राज है; गाड़ीवाले वहाँ सिर्फ सवारियों के बिना अपने झबरीले घोड़ों के लिए घास ले जाते हुए दिखायी देते हैं। पाँच रूबल महीने पर आपको पूरा फ्लैट किराये पर मिल सकता है, जिसमें सुबह की कॉफी भी शामिल हो सकती है। वहाँ जो विधवाएँ अपनी पेंशन पर रहती हैं वे उस समाज का सबसे अभिजात वर्ग होती हैं; उनका आचार-व्यवहार बहुत परिष्कृत होता है, वे अक्सर अपने कमरों में झाड़ू लगाकर कूड़ा बाहर निकाल देती हैं, और अपनी सहेलियों से गोश्त और करमकल्ले की ऊँची कीमतों के बारे में बातें करने में उन्हें मजा आता है; उनकी मिल्कियत में आमतौर पर एक नौजवान बेटी होती है, जो शान्त और आत्म-त्याग की भावना से परिपूर्ण जीव होती है और अकसर सूरत-शक्ल की भी अच्छी होती है; उनके पास एक बेहूदा छोटा-सा कुत्ता और एक दीवार की घड़ी होती है जिसका पेण्डुलम बड़े उदास भाव से टिक-टिक करता रहता है। उसके बाद नम्बर आता है अभिनेताओं का, जिनकी आर्थिक स्थिति उन्हें कोलोम्ना छोड़कर चले जाने की इजाजत नहीं देती, जो रंगमंच के सभी लोगों की तरह स्वतन्त्रता-प्रेमी लोग होते हैं, जो केवल आनन्द के लिए जिन्दा रहते हैं। आप उन्हें अपना ड्रेसिंग गाऊन पहने रिवाल्वर ठीक करते हुए, दफ्ती के टुकड़ों से घर के लिए कोई उपयोगी चीज बनाते, या मिलने आये हुए किसी दोस्त के साथ ड्राफ्ट्स या ताश खेलने, और अपनी शामें ठीक सुबह की तरह ही बिताते देख सकते हैं, कभी-कभी बस इतना फर्क जरूर होता है कि शाम को वे पंच पी लेते हैं। इनके बाद, जो कोलोम्ना का श्रेष्ठ वर्ग है, आम टुटपुँजिया लोग आते हैं। उन सबकी किस्में गिनाना उतना ही मुश्किल है जितना कि पुराने सिरके में पनपनेवाले कीड़ों की किस्में गिनाना। उनमें आपको पूजा-पाठ करनेवाली बूढ़ी औरतें मिलेंगी; शराब पीनेवाली बूढ़ी औरतें मिलेंगी; ऐसी बूढ़ी

औरतें मिलेंगी जो पूजा-पाठ भी करती हैं और शराब भी पीती हैं; ऐसी बूढ़ी औरतें जो रहस्यमय तरीकों से अपना पेट पालती हैं, चींटियों की तरह फटे-पुराने कपड़े और चीथड़े घसीटकर पन्द्रह कोपेक में बेचने के लिए कलींकिन पुल से गुदड़ी बाजार तक ले जाती हैं; दूसरे शब्दों में, मानव-जाति की सबसे अभागी तलछट, जिसकी हालत सुधारना परोपकारी से परोपकारी अर्थशास्त्री के लिए भी मुश्किल होता।

''मैंने उनकी चर्चा यह बताने के लिए की है कि ऐसे लोगों को अकसर किस तरह आकस्मिक वक्ती मदद के लिए अचानक कोई जरिया ढूँढ़ने पर, कर्ज का सहारा लेने पर मजबूर होना पड़ता है, और इसकी वजह से उनके बीच खास किस्म के खून चूसनेवाले पैदा होते हैं और उन्हें बहुत ज्यादा कीमत की चीजें गिरवी रखने के लिए मजबूर करते हैं और सूद की ऊँची दर पर छोटी-छोटी रकमें कर्ज देते हैं। ये छोटे सूदखोर अकसर अपने पेशे के ऊँचे लोगों से ज्यादा बेरहम होते हैं, क्योंकि वे जिस तरह के चीथड़े पहननेवाले और कंगाल लोगों के बीच फूलते-फलते हैं, वैसे दरिद्र और कंगाल लोगों से तो धनी सूदखोरों का कभी पाला ही नहीं पड़ता, जो सिर्फ गाड़ियों पर बैठनेवाले ग्राहकों से लेन-देन करते हैं। इस तरह मानवीय भावनाओं के बचे-खुचे अवशेष भी जल्द ही उनके दिलों से निकल जाते हैं। इन्हीं सूदखोरों में एक ऐसा था... लेकिन यहाँ पर मैं आपको यह बता दूँ कि जिस घटना का आपके सामने बयान करने का मैंने बीड़ा उठाया है वह पिछली शताब्दी की है, यानी उस जमाने की जब हमारी स्वर्गीय सार्वभौम महारानी कैथरीन द्वितीय राज करती थीं। जैसा कि आप समझ सकते हैं, उस वक्त से कोलोम्ना की शक्ल-सूरत और वहाँ की अन्दरूनी जिन्दगी काफी बदल गयी होगी। तो, इन्हीं सूदखोरों में एक सूदखोर था—जो हर तरह से कमाल का आदमी था और बहुत दिनों से उस इलाके में रहता था। वह ढीले-ढाले एशियाई ढंग के कपड़े पहनता था; उसके साँवले चेहरे से पता चलता था कि उसकी पैदाइश कहीं दक्षिण में हुई होगी, लेकिन ठीक-ठीक वह किस जाति का था, हिन्दुस्तानी था, यूनानी था, या फारसी था, यह कोई यकीन के साथ नहीं बता सकता था। अपने लम्बे कद, अपने बेहद भारी-भरकम डीलडौल, अपने साँवले, चुसे हुए और घिनौनी रंगतवाले चेहरे, रहस्यमयी चमकवाली अपनी बड़ी-बड़ी आँखों और छज्जे की तरह आगे को निकली हुई घनी-घनी भवों की वजह से वह फीकी रंगतवाले नगर-निवासियों से देखने में बिल्कुल अलग लगता था। उसका घर भी चारों तरफ के छोटे-छोटे लकड़ी के घरों से बिल्कुल अलग ढंग का था। वह उस तरह की पत्थर की इमारत थी जैसी कि किसी जमाने में जेनोआ के सौदागर बहुत बड़ी संख्या में बनाते थे, जिनमें टेढ़ी-मेढ़ी, बेमेल खिड़कियाँ, लोहे की झिलमिलियाँ और चटकनियाँ होती थीं। यह सूदखोर अपने धन्धे के दूसरे लोगों से इस बात में अलग था कि वह गरीब से गरीब भिखारिन से लेकर फिजूलखर्च दरबारी तक किसी को भी जितनी रकम की उसे जरूरत हो दे सकता था। उसके घर के सामने अकसर बेहद चमचमाती हुई गाड़ियाँ आकर रुकती थीं, जिनकी खिड़कियों में से आप ऊँचे समाज की किसी महिला की बनी-सँवरी सूरत की झलक देख सकते थे। अफवाह थी कि उसके पास अकूत धन-दौलत, जेवरों और गिरवी रखी गयी

तरह-तरह की चीजों से भरे हुए लोहे के सन्दूक थे, लेकिन इतना सब होते हुए भी वह दूसरे सूदखोरों की तरह लालची नहीं था। वह खुशी-खुशी कर्ज देता था, और उसकी अदायगी की शर्तें भी बहुत माकूल होती थीं। लेकिन हिसाब-किताब की कुछ विचित्र तिकड़मों से वह अपने कर्ज पर बेहद ज्यादा सूद वसूल कर लेता था। बहरहाल, अफवाह यही थी। लेकिन सबसे अजीब बात जिस पर सभी को हैरत होती थी, यह थी कि उसके सभी कर्जदारों का अंजाम बुरा होता था; अन्त में चलकर उन सभी की बड़ी दुर्दशा होती थी। यह तो यकीन के साथ अब तक नहीं कहा जा सकता कि यह सिर्फ आम लोगों की राय थी, बेसिर-पैर की अन्धविश्वास पर आधारित हवाई बातें थीं या जान-बूझकर उसे बदनाम करने की कोशिश थी। लेकिन इस तरह की कई जीती-जागती और बिल्कुल खुली मिसालें थीं जो बहुत थोड़े ही अरसे में सबकी आँखों के सामने हुई थीं।

''उस जमाने के एक सबसे रईस घराने के नौजवान बेटे की ओर सबका ध्यान गया, जिसने सरकारी नौकरी में नाम कमाया था, जिसने हर उत्तम और सचमुच मूल्यवान चीज का पक्का समर्थक होने का परिचय दिया था, जो कला और मानव प्रतिभा की सभी कृतियों का शौकीन था, और जिसमें इस बात के सभी चिह्न मौजूद थे कि आगे चलकर वह कलाओं का संरक्षक बनेगा। जल्दी ही उसे स्वयं महारानी की ओर से मान्यता मिल गयी, जिन्होंने उसे एक ऊँचे पद पर तैनात कर दिया जो उसकी सारी जरूरतों को पूरा करने के लिए काफी था, एक ऐसे पद पर जहाँ रहकर वह विद्याओं को बढ़ावा देने के लिए और लोक-कल्याण के लिए भी बहुत बड़े-बड़े काम कर सका। उस नौजवान रईसजादे ने अपने चारों ओर कलाकारों, कवियों और विद्वानों को जमा किया। वह उन सब लोगों को काम और प्रेरणा देने को बेहद उत्सुक था। उसने निजी तौर पर बहुत-से उपयोगी प्रकाशनों में पैसा लगाने का जिम्मा लिया, बहुत-से काम करवाने का बीड़ा उठाया, प्रोत्साहन देने के लिए प्रतियोगिताएँ करवायीं, इन सभी योजनाओं पर बड़ी-बड़ी रकमें खर्च कीं और खुद उसकी हालत बिगड़ती गयी। लेकिन उसमें परोपकार की ऐसी लगन थी कि वह इन कामों को छोड़ने के लिए तैयार नहीं था, उसने कर्ज जुटाने के हर तरह के उपाय किये और अन्त में इस सूदखोर के पास पहुँचा। उससे काफी बड़ी रकम कर्ज पाने के बाद यह नौजवान रईस कुछ ही दिनों में बिल्कुल बदल गया: वह प्रतिभा के लिए अभिशाप बन गया और हर विकासशील बुद्धिवाले को दण्ड देने लगा। वह हर साहित्यिक कृति में कोई न कोई बुराई देखने लगा और जो शब्द भी वह पढ़ता था उसका अर्थ तोड़ने-मरोड़ने लगा। फिर, दुर्भाग्य से, फ्रांस की क्रान्ति हुई, और उससे उसे हर प्रकार का द्वेषपूर्ण प्रहार करने के लिए हथियार मिल गया। वह हर चीज में क्रान्तिकारी प्रवृत्तियाँ देखने लगा, जो कुछ भी वह पढ़ता था उसमें वह छिपा हुआ अर्थ देखने लगा। वह हर चीज को ऐसे सन्देह से देखने लगा कि आखिरकार वह अपने आप पर भी शक करने लगा, भयानक और अनुचित निन्दाएँ करने लगा और अपने चारों ओर दु:ख फैलाने लगा। स्वाभाविक रूप से इन हरकतों की खबरें राज-दरबार तक पहुँचे बिना न रह सकीं। हमारी उदारमना महारानी उद्विग्न हो उठीं, और चूँकि वह आत्मा के उन उदात्त गुणों से परिपूर्ण थीं जिनका

राजाओं को वरदान होता है, इसलिए उन्होंने एक फरमान जारी किया, जिसके शब्द तो दुर्भाग्यवश हम लोगों तक पूरी तरह नहीं पहुँच सकते हैं, लेकिन जिसका गूढ़ तात्पर्य बहुतों के हृदयों पर अंकित हो गया है। महारानी ने कहा कि राजतान्त्रिक शासन में ऐसा नहीं होता कि आत्मा के उदात्त और उत्कृष्ट आवेगों को कुचला जाये और मेधावी प्रतिभा, कविता और ललितकला की कृतियों की उपेक्षा की जाये और उन्हें दण्ड का भागी बनाया जाये, बल्कि, इसके विपरीत, राजा-महाराजा उनके एकमात्र सच्चे संरक्षक रहे हैं; उनके उदारतापूर्ण संरक्षण में इस दुनिया की शेक्सपियर और मोलिएर जैसी अनन्य प्रतिभाएँ पनपी हैं, जबकि दान्ते को अपने गणतान्त्रिक राज्य में अपने लिए कोई सहारा नहीं मिल सका; कि सच्ची मेधावी प्रतिभाएँ उस समय उत्पन्न होती हैं जब राष्ट्र और उनके अधिपति अपनी सत्ता और अपने वैभव के शिखर पर होते हैं, न कि उस समय जबकि वे उन शर्मनाक राजनीतिक कार्रवाइयों और गणतान्त्रिक आतंक का शिकार रहते हैं, जो आज तक एक भी कवि नहीं पैदा कर सके हैं; कि हमें कवियों और कलाकारों को ऊँचे स्थान पर बिठाना चाहिये क्योंकि वे दूसरों की आत्माओं में उद्विग्नता और असन्तोष का नहीं बल्कि निर्विघ्न सुख-शान्ति का संचार कर सकते हैं; कि विद्वान, कवि और सभी कलाओं के प्रतिनिधि राजमुकुट के हीरे-मोती होते हैं; वे इन क्षेत्रों में सौन्दर्य को चार चाँद लगाने और महान सार्वभौम शासक के युग की चमक-दमक को बढ़ाने का ही काम करते हैं। ये शब्द कहने के बाद उस क्षण महारानी का वैभव दिव्य लग रहा था। मुझे याद है कि बूढ़े लोग जब इस बात ही चर्चा करते थे तो उनकी आँखों में आँसू आ जाते थे। हर आदमी का इस मामले से गहरा सम्बन्ध हो गया। यह बात ध्यान में रखने की है कि राष्ट्रीय गौरव की हमारी भावना को इस बात का श्रेय है कि रूसी हृदय की यह विशेषता है कि उसमें दलित-पीड़ित आदमी का पक्ष लेने की सराहनीय प्रवृत्ति होती है। उस कुलीन पुरुष ने उस पर किये गये भरोसे के प्रति जो विश्वासघात किया था उसके लिए उसे उचित दण्ड दिया गया और उसे उसके पद से हटा दिया गया; लेकिन उससे भी भीषण दण्ड उसके देशवासियों के चेहरों पर अंकित था। यह दण्ड था उसके प्रति तिरस्कार की निर्णायक और सार्वत्रिक भावना। उसकी दम्भपूर्ण आत्मा को जो यातना सहन करनी पड़ी उसे शब्दों में नहीं बयान किया जा सकता; उसके अभिमान, आहत अहंकार और छिन्न-भिन्न आशाओं ने मिलकर उसके जीवन की अवधि को पागलपन और सरसाम के भयानक दौरों के बीच समय से पहले ही समाप्त कर दिया।

''एक और ज्वलन्त उदाहरण था जिसे सभी ने देखा था, वह उदाहरण था एक अनन्य सुन्दरी का—जैसी उन दिनों हमारी उत्तरी राजधानी में बहुत-सी थीं—लेकिन वह अन्य सभी को मात करती थी। वह हमारे उत्तरी सौन्दर्य और दोपहर की खूबसूरती का मिला-जुला अनूठा रूप, उनके चमत्कारी समन्वय का साकार रूप थी, अनूठी चमक-दमक का एक रत्न। मेरे बाप खुद कहते थे कि उन्होंने अपनी जिन्दगी में उसकी जैसी कोई सुन्दरी नहीं देखी थी। वह हर चीज का सुचारु सम्मिश्रण प्रतीत होती थी: धन-दौलत, बुद्धि-विवेक और सुशील स्वभाव। उसके बहुत-से चाहनेवाले थे, जिनमें सबसे उल्लेखनीय था राजकुमार र०, जो बेहद

अच्छा और कुलीन नौजवान था, बेहद खूबसूरत और अत्यन्त शौर्य के काम करने को सदा तत्पर। जैसे किसी उपन्यास से स्त्रियों का मनचाहा आदर्श पुरुष निकाल लिया गया हो, हर दृष्टि से बिल्कुल ग्रैण्डीसन जैसा। राजकुमार र० बुरी तरह प्रेम में पागल हो उठा; इस प्रेम का जवाब भी ऐसे ही उत्कृट प्रेम से दिया गया। लेकिन सगे-सम्बन्धी इस जोड़ी को बराबर की जोड़ी नहीं समझते थे। राजकुमार बहुत पहले अपनी पुश्तैनी जमीन खो चुका था, उसके परिवार की हालत बिगड़ती गयी थी, और उसकी दुर्दशा का सभी को पता था। अचानक राजकुमार कुछ समय के लिए राजधानी से यह बहाना करके चला गया कि वह अपने मामलात को ठीक करने जा रहा है, और जब वह लौटा तो उसके ठाठ ही निराले थे। वह शानदार नाच की पार्टियों और जलसों का आयोजन करने लगा और उसकी ख्याति दरबार तक पहुँच गयी। उस सुन्दर लड़की का बाप उसे सराहना की दृष्टि से देखने लगा, और सारा शहर अत्यन्त रोमांचकारी शादी की तैयारियाँ करने लगा। यह कोई भी यकीन के साथ नहीं बता सकता था कि दूल्हे के भाग्य ने कैसे यह पलटा खाया था, और यह दौलत कहाँ से मिली थी; लेकिन अफवाह फैल रही थी कि उसने किसी अजीब सूदखोर महाजन से कोई सौदा किया था और उसी से उसे यह कर्ज मिला था। बहरहाल, जो भी हो, सारे शहर में इस शादी की चर्चा थी। दूल्हा और दुल्हन दोनों सभी की ईर्ष्या के पात्र थे। सभी जानते थे कि उन दोनों को एक-दूसरे से कितना गहरा और सच्चा प्रेम था, और यह भी कि दोनों को कितने लम्बे अर्से तक इन्तजार करने पर मजबूर किया गया था और दोनों में कितनी खूबियाँ थीं। उत्साही महिलाएँ अभी से कल्पना करने लगी थीं कि यह नौजवान जोड़ी कैसे अलौकिक सुख का भोग करेगी। लेकिन घटनाओं ने कुछ दूसरी ही दिशा अपनायी। एक ही साल के अन्दर पति में भयानक परिवर्तन आ गया। उसका चरित्र, जो अब तक उदात्त और शालीन था, शंका और ईर्ष्या, असहिष्णुता और स्वेच्छाचारिता के विष से दूषित हो गया। यह अत्याचारी हो गया और अपनी पत्नी को यातनाएँ देने लगा, और, जिस बात की कोई पहले से कल्पना भी नहीं कर सकता था, वह अत्यन्त अमानुषिक काम करने लगा, यहाँ तक कि वह उसे कोड़े भी लगाने लगा। साल ही भर बाद कोई उस औरत को पहचान भी नहीं सकता था, जिसके रोम-रोम से पहले उल्लास फूटा पड़ता था और जिसके पीछे आज्ञाकारी प्रशंसकों की भीड़ चलती थी। आखिरकार जब वह इन मुसीबतों को और ज्यादा बर्दाश्त न कर सकी तो पहले उसी ने तलाक का सुझाव रखा। तलाक की बात सुनते ही उसके पति का गुस्सा भड़क उठा। भयंकर रोष से प्रेरित होकर वह छुरा चमकाता हुआ उसके कमरे में घुस आया और अगर उसे पकड़कर रोक न लिया गया होता तो उसने निश्चित रूप से उसको छुरा मार दिया होता। घोर निराशा का शिकार होकर उसने छुरे का रुख अपनी ओर मोड़ लिया और भयानक पीड़ा से छटपटाते हुए उसने अपना जीवन समाप्त कर दिया।

''इन दो वारदातों के अलावा, जो सबकी आँखों के सामने हुई थीं, निम्न वर्गों के लोगों के बारे में बहुत-सी घटनाओं के किस्से सुनाये जाते थे, जिनमें से लगभग सभी का बहुत भयानक अन्त हुआ। ईमानदार और संजीदा लोगों को शराब पीने की लत पड़ गयी; एक

दुकान के कारिन्दे ने अपने मालिक को लूट लिया; एक घोड़ागाड़ीवाले ने, जो बरसों से ईमानदारी की रोजी कमाता आया था, चन्द कोपेक के लिए अपनी एक सवारी को कत्ल कर दिया। इस तरह की घटनाओं की वजह से, जो हमेशा मिर्च-मसाला लगाकर बयान की जाती थीं, कोलोम्ना के सीधे-सादे रहनेवालों के दिल में दहशत बैठ गयी। किसी को भी इस बात में शक नहीं रह गया कि उस आदमी में कोई अशुभ शक्ति थी। अफवाह थी कि वह ऐसी शर्तों पर कर्ज देता था कि सुनकर रोंगटे खड़े जो जाते थे और जो भी अभागा आदमी उन शर्तों का शिकार हो जाता था वह कभी उन्हें किसी दूसरे पर लागू करने की हिम्मत नहीं कर सकता था; लोग कहते थे कि उसके सिक्कों में कोई चुम्बकीय गुण था, वे अपने आप ही दहककर लाल हो जाते थे और उन पर कुछ विचित्र निशान होते थे... मतलब यह कि तरह-तरह की हास्यास्पद कहानियाँ सुनने को मिलती थीं। लेकिन कमाल की बात यह थी कि कोलोम्ना की सारी आबादी, कंगाल बुढ़ियों, छोटे-मोटे सरकारी नौकरों, मामूली अभिनेताओं की यह सारी दुनिया, सारांश यह कि वे सभी छोटे-मोटे लोग, जिनकी हम अभी चर्चा करते रहे हैं, इस दुष्ट सूदखोर के पास मदद के लिए जाने के बजाय बड़ी से बड़ी मुसीबतें बर्दाश्त कर लेना पसन्द करते थे; इस तरह की भी मिसालें थीं जब कुछ बुढ़ियाँ भूखी मर गयी थीं, जिन्होंने अपनी आत्माओं को नष्ट करने के बजाय अपने शरीर को इस ढंग से घुला देना ज्यादा पसन्द किया था। लोग सड़क पर अचानक उससे मुठभेड़ हो जाने पर सहज ही डर जाते थे। रास्ता चलते लोग बड़ी सावधानी से बचकर पीछे हट जाते थे और बड़ी देर तक उसे घूरते रहते थे, उसके भारी-भरकम डीलडौल को दूर आँखों से ओझल होते देखते रहते थे। उसकी बाहरी चाल-ढाल में ही इतनी असाधारण बातें थीं कि लोग यह मानने पर विवश थे कि उसमें कोई अलौकिक विद्वेष भरा हुआ था। उसके चेहरे पर बहुत गहरे अंकित सहज ही ध्यान आकर्षित करनेवाले वे लक्षण जो किसी दूसरे के चेहरे पर नहीं पाये जाते, उसकी काँसे की तरह चमकती हुई सूरत, उसकी भवों का बेहद घना झबरापन, उसकी दहकती हुई असह्य आँखें, उसके ढीले-ढाले एशियाई पहनावे की सिलबटें—ये सभी चीजें मानों पुकार-पुकारकर कहती थीं कि उसके सीने में जो मनोवेग धधक रहे थे उनकी तुलना में साधारण मनुष्यों के मनोवेग बहुत मन्द थे। उससे मुठभेड़ हो जाने पर मेरे पिताजी हमेशा ठिठककर खड़े रह जाते थे और कभी यह कहने से नहीं चूकते थे: 'पिशाच, बिल्कुल पिशाच!' लेकिन मैं जल्दी से आपका परिचय पिताजी से करा दूँ, जिनके बारे में लगे हाथ यह बता दिया जाये कि वही इस कहानी के नायक हैं।

''मेरे पिताजी कई बातों की दृष्टि से कमाल के आदमी थे। वह उन दुर्लभ कलाकारों में से थे, उन चमत्कारी लोगों में से थे, जिन्हें केवल रूस-माता की पवित्र कोख पैदा कर सकती है; वह स्वशिक्षित चित्रकार थे, जो किसी शिक्षक या पाठशाला का, किन्हीं नियमों या मार्गदर्शक सिद्धान्तों का सहारा लिये बिना केवल अपनी आत्मा में पथ-प्रदर्शन खोजते थे, जो केवल निष्कलंकता प्राप्त करने की इच्छा से प्रेरित होते थे और ऐसे सिद्धान्तों का पालन करते थे जिनसे शायद वह स्वयं भी परिचित नहीं थे, वह उसी मार्ग पर चलते थे, जिसकी

ओर उनकी आत्मा संकेत करती थी; वह प्रकृति की उन विलक्षण प्रतिभाओं में से थे जिन्हें उनके समकालीन बहुधा बड़े तिरस्कार से अज्ञानी ठहरा देते हैं लेकिन जो आलोचना और विफलता से निरुत्साह नहीं होते, बल्कि वे उनसे नया उत्साह और नयी शक्ति प्राप्त करते हैं और उन कृतियों से बहुत आगे बढ़ जाते हैं जिनकी वजह से उन्हें अज्ञानी की संज्ञा दी गयी थी। प्रत्येक वस्तु के आधारभूत अर्थ के बारे में उनकी समझ बहुत गहरी थी; वह 'ऐतिहासिक चित्र' के वास्तविक महत्व को समझते थे; वह इस बात को समझते थे कि रफाएल, लियोनार्दो द विंची, टिशियन या कार्रेजियो की बनायी हुई कोई सीधी-सादी मुखाकृति, उनका बनाया हुआ कोई छवि-चित्र क्यों ऐतिहासिक चित्र कहलाया जा सकता है और किसी ऐतिसाहिक विषय पर बनाया गया कोई विशाल चित्र कभी भी ऐतिहासिक कला के बारे में कलाकार के तमाम दावों के बावजूद शैलीगत चित्र से अधिक कुछ नहीं हो सकता। उनकी आन्तरिक भावनाएँ और उनकी निजी आस्थाएँ दोनों ही उनकी तूलिका को ईसाई विषयों की ओर, उत्कृष्टता की सर्वोच्च और चरम सीमा की ओर ले जाती थीं। वह तिरस्कार या चिड़चिड़ाहट की उस भावना से सर्वथा मुक्त थे जो कई कलाकारों के स्वभाव में अन्तर्निहित होती है। वह दृढ़ चरित्र के, ईमानदार और खरे आदमी थे, बल्कि कुछ हद तक अक्खड़ भी, बाहर से देखने में वह काफी कठोर थे और आन्तरिक स्वाभिमान से भी सर्वथा वंचित नहीं थे, वह लोगों के बारे में अपनी राय ऐसे शब्दों में व्यक्त करने के आदी थे जिनमें सहिष्णुता भी होती थी और तीखापन भी। 'उनकी बात सुनी ही क्यों जाये,' वह कहा करते थे, 'मैं कोई उनके लिए तो काम करता नहीं हूँ। मैं अपनी तस्वीरें उनकी बैठकों के लिए तो बनाता नहीं हूँ, वे तो गिरजाघरों में लगायी जाती हैं। जो लोग मेरी तस्वीरों को समझेंगे वे मेरा आभार मानेंगे, और जो नहीं समझेंगे वे भी ईश्वर से प्रार्थना तो करेंगे ही। दुनिया के माया-मोह में फँसे हुए आदमी को कला की समझ न होने के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता; —अगर वह ताश की अच्छी बाजी खेलना जानता है, शराब और घोड़ों के बारे में दो-एक बातें जानता है—तो रईस को इससे ज्यादा कुछ जानने की जरूरत ही क्या है? सच तो यह है कि अगर उसके मन में कला के क्षेत्र में टाँग अड़ाने की बात समा जाये, और वह अपने आपको बुद्धिजीवी जताने की कोशिश करने लगे तो वह सबके लिए एक मुसीबत बन जायेगा। जिसका काम उसी को भावे, हर आदमी को अपनी ही रुचि के अनुसार चलना चाहिए। निजी तौर पर मैं उस आदमी का ज्यादा सम्मान करता हूँ जो साफ-साफ कह देता है कि वह कुछ नहीं समझता, बजाय उस आदमी के जो ढोंगी होता है और उस बात को भी जानने का दावा करता है जिसे वह नहीं जानता और बस हर चीज की छीछालेदर कर देता है।' वह बहुत ही कम पैसे लेकर काम करते थे, बस उतना ही पैसा माँगते थे जितने की उन्हें अपने परिवार का भरण-पोषण करने के लिए और अपने काम के आवश्यक साधन जुटाने के लिए जरूरत होती थी। इसके अलावा, वह कभी, किसी भी हालत में, दूसरों की सहायता करने से, अपने जरूरतमन्द साथियों की ओर मदद का हाथ बढ़ाने से इन्कार नहीं करते थे; वह अपने पूर्वजों के सीधे-सादे पवित्र धर्म का पालन करते थे, और शायद यही कारण था कि सन्तों का चित्रण

करते समय वह उनकी आकृति में वह सौम्य भाव लाने में सफल होते थे जो प्रतिभाशाली कलाकार भी नहीं ला पाते थे। अन्ततः, अपने काम की निरन्तर उत्कृष्टता की वजह से और अपने चुने हुए मार्ग पर अडिग रूप से चलते रहने की वजह से उन्हें उन लोगों की ओर से भी सम्मान मिलने लगा जो उन्हें अज्ञानी और अनाड़ी कहा करते थे। गिरजाघरों की ओर से लगातार उन्हें चित्र बनाने का काम मिलने लगा और उनके पास काम की कभी कमी नहीं रहती थी। इसी तरह के एक काम में वह विशेष रूप से बिल्कुल तल्लीन हो गये। मुझे अब यह तो ठीक-ठीक याद नहीं रह गया कि उसका विषय क्या था, लेकिन मैं इतना जानता हूँ कि उस तस्वीर में कहीं अन्धकार के दानव का चित्रण करने की जरूरत थी। बहुत देर तक वह सोचते रहे कि वह उसे क्या आकृति प्रदान करें; वह उस आकृति में हर उस चीज को साकार कर देना चाहते थे जो उत्पीड़क हो, हर वह चीज जो मनुष्य पर बोझ हो। इस प्रकार विचार करने के दौरान कभी-कभी उस रहस्यमय सूदखोर की सूरत उनके दिमाग में आती थी और वह सोचने लगते थे: 'उसी को मुझे अपने चित्र में पिशाच के लिए नमूना बनाना चाहिए।' उनके आश्चर्य की कल्पना कीजिये कि एक दिन जब वह अपने स्टूडियो में काम कर रहे थे तो उन्हें किसी के दरवाजा खटखटाने की आवाज सुनायी दी; दरवाजा खुला तो वह भयानक सूदखोर अन्दर आया। अन्दर ही अन्दर उनके सारे शरीर में सिहरन दौड़ गयी।

'' 'आप तस्वीरें बनाते है?' आगन्तुक ने किसी भूमिका के बिना मेरे पिताजी से पूछा।

'' 'बनाता तो हूँ,' मेरे पिताजी ने चकित होकर कहा, और सोचने लगे कि देखें अब आगे क्या होता है।

'' 'अच्छी बात है। मेरी तस्वीर बना दीजिये। शायद मैं जल्दी ही मर जाऊँगा, और मेरे कोई सन्तान भी नहीं है; लेकिन मैं नहीं चाहता कि मैं बिल्कुल ही मर जाऊँ, मैं जिन्दा रहना चाहता हूँ। क्या आप ऐसी तस्वीर बना सकते हैं जो बिल्कुल जीती-जागती चीज जैसी हो?'

''मेरे पिताजी ने मन ही मन सोचा: इससे अच्छा और क्या हो सकता है? उसने खुद आकर अपने आपको मेरे चित्र के पिशाच के लिए पेश किया है। उन्होंने हामी भर ली। दोनों के बीच समय और पारिश्रमिक तय हो गया और अगले ही दिन मेरे पिताजी हाथ में रंग की तख्ती और तूलिका लिये हुए अपने ग्राहक के घर पहुँच गये। चारों और ऊँचे जँगले से घिरा हुआ आँगन, कुत्ते, लोहे के फाटक और किवाड़, मेहराबदार खिड़कियाँ, पुराने जमाने के बेहद खूबसूरत कालीनों से ढकी हुई तिजोरियाँ और अन्त में उस घर का असाधारण मालिक, जो उनके सामने निश्चल बैठा था—इन सब चीजों का उन पर विचित्र प्रभाव पड़ा। खिडकियों में जान-बूझकर इतना बहुत-सा सामान ठूँस रखा गया था कि उनमें से सिर्फ ऊपर एक बहुत पतली-सी सन्द में से ही रोशनी आती थी। अरे, यही तो उसके चेहरे के लिए लाजबाब रोशनी है! मेरे पिताजी ने खुश होकर मन ही मन कहा और बड़ी उत्सुकता से चित्र बनाने लगे, मानों उनको डर लग रहा हो कि सौभाग्य से जो यह रोशनी मिली थी वह हमेशा नहीं रहेगी। 'क्या जबर्दस्त चेहरा है!' उन्होने मन ही मन दोहराया, 'अगर मैं अपने चित्र को उसका आधा भी प्रभावशाली बना सकूँ जैसा वह देखने में लगता है तो वह मेरे सारे सन्तों और फरिश्तों को

नष्ट कर देगा, वे उसके सामने मन्द पड़ जायेंगे। कैसी पैशाचिक शक्ति है! अगर मैं उसकी आकृति की एक झलक भी ठीक ला सकूँ तो वह चित्र में से कूदकर बाहर निकल आयेगा। कैसा असाधारण चेहरा-मोहरा है!' वह लगातार दोहराते रहे; जैसे-जैसे उन्हें कैनवस पर उस आकृति के कुछ लक्षण उभरते हुए दिखायी देने लगे वैसे-वैसे अपने चित्र के विषय के प्रति उनका उत्साह बढ़ता गया। लेकिन जैसे-जैसे वह उसकी पूर्ति के निकट पहुँचते गये वैसे-वैसे एक घुटन-भरी चिन्ता का आभास भी बढ़ता गया, जिसका कोई कारण वह स्वयं नहीं बता सकते थे। फिर भी इस चिन्ता के बावजूद उन्होने अपने हर आवेश को वश में करके उस चेहरे की भाव-भंगिमा के हर उतार-चढ़ाव को अक्षरश: सही-सही अपने चित्र में उतार लेने का फैसला किया। पहले-पहल उन्होनें आँखों की ओर सबसे अधिक ध्यान दिया। उन आँखों में इतनी अधिक शक्ति थी कि वह उन्हें हूबहू अपने चित्र में उतार लाने की आशा नहीं कर सकते थे। फिर भी हर कीमत पर वह उनके हर लक्षण और उनके भाव के हर उतार-चढ़ाव को खोज निकालने के लिए, उनके रहस्य की थाह पाने के लिए कृतसंकल्प थे... लेकिन जैसे ही उन्होंने अपनी तूलिका से उनकी गहराइयों में उतरने की कोशिश की वैसे ही उनकी आत्मा ऐसी घृणा से, ऐसी विचित्र घुटन से भर उठी कि कुछ देर के लिए वह अपने चित्र से हाथ खींच लेने पर मजबूर हो गये। आखिकार वह इसे और अधिक सहन न कर सके; उन्हें ऐसा महसूस होने लगा कि उसकी आँखे उनकी आत्मा को झुलसे दे रही हैं और उनके अन्दर ऐसा भय पैदा कर रही हैं जो उनकी समझ के बाहर था। अगले दिन उनकी दहशत और बढ़ गयी, और तीसरे दिन तो और भी गहरी हो गयी। वह भयभीत हो उठे, उन्होंने अपनी तूलिका फेंक दी और साफ ऐलान कर दिया कि वह उस काम को जारी नहीं रख सकते। ये शब्द सुनकर उस विचित्र सूदखोर पर आश्चर्यजनक प्रतिक्रिया हुई। वह मेरे पिताजी के चरणों में गिर पड़ा और गिड़गिड़ाकर उनसे चित्र को पूरा कर देने की प्रार्थना करने लगा; उसने कहा कि इस पर उसकी सारी नियति और इस संसार में उसका अस्तित्व निर्भर था, कि मेरे पिताजी ने उसकी सजीव आकृति के लक्षणों को अपनी तूलिका से छू लिया था और यह कि अगर वह उन्हें सच्चे रूप में व्यक्त करने में सफल हो जायें तो एक अलौकिक शक्ति के माध्यम से उसका जीवन उस चित्र में सुरक्षित रह सकता था, कि उसकी बदौलत वह बिल्कुल मर जाने से बच जायेगा, क्योंकि उसे इस दुनिया में जीवित रहना है। ये शब्द सुनकर मेरे पिताजी पर आतंक छा गया: वे उनके कानों में इतने विचित्र और भयानक लग रहे थे कि उन्होंने अपनी तूलिका और रंगों की तख्ती दोनों ही को फेंक दिया और झपटकर कमरे से बाहर चले गये ।

"जो कुछ हुआ था उसकी याद उन्हें सारे दिन और सारी रात सताती रही, और अगले दिन सबेरे उस सूदखोर के यहाँ से वह चित्र एक औरत के हाथ उनके पास भिजवा दिया गया; उस सूदखोर के यहाँ नौकरी करनेवालों में बस यही औरत थी, जिसने फौरन साफ ऐलान कर दिया कि उसके मालिक को वह चित्र नहीं चाहिये, वह उसके लिए कोई भुगतान नहीं करेगा और इसलिए उसने उसे वापस भिजवा दिया है। उसी दिन शाम को उन्हें पता चला कि वह

सूदखोर मर गया था और उसे उसके धर्म के संस्कारों के अनुसार दफन कर देने की तैयारी की जा रही थीं। यह सब कुछ उनकी समझ के बाहर था। इसके साथ ही स्वयं उनके चरित्र में एक बड़ा परिवर्तन आया; उन पर चिन्ता की भावना छा गयी, जिसके कारण की थाह वह स्वयं भी नहीं लगा पाये, और शीघ्र ही उन्होनें एक ऐसा काम किया जिसकी उनसे कोई आशा नहीं कर सकता था। कुछ समय से उनके एक शिष्य की कृतियाँ कलापारखियों और कला-प्रेमियों के एक छोटे-से समूह का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने लगी थीं। मेरे पिताजी को अपने उस शिष्य की प्रतिभा का हमेशा से आभास था और इसीलिए वह उसकी ओर विशेष ध्यान देते थे। अचानक वह उससे ईर्ष्या करने लगे। हर जगह उस चित्रकार में जो दिलचस्पी ली जा रही थी और उसकी कला की जो चर्चा हो रही थी वह उनके लिए असह्य हो उठी। आखिरकार, इन सब बातों से बढ़कर उन्हें पता चला कि उनके शिष्य को हाल ही में बनाये गये एक धनी गिरजाघर के लिए एक चित्र बनाने का निमन्त्रण दिया गया है। यह उनकी बर्दाश्त के बाहर था। 'नहीं, मैं चुपचाप बैठा रहकर उस छोकरे को इस तरह जीतने नहीं दूँगा!' उन्होंने ऐलान किया। 'अपने से बड़ों को धूल चटाने की इतनी जल्दी न करो, बच्चू! भगवान की कृपा से अभी मुझमें कुछ ताकत बाकी है। देखना है कौन पहले धूल चाटता है।' और उस खरे और ईमानदार आदमी ने हर तरह की तिकड़म और जोड़-तोड़ के वे सारे हथकण्डे अपनाये जिनसे वह हमेशा से नफरत करते आये थे; आखिरकार मेरे पिताजी उस तस्वीर के लिए एक प्रतियोगिता कराने में सफल हो गये ताकि दूसरे चित्रकार भी अपने चित्र उसमें भेज सकें। इसके बाद वह अपने कमरे में बन्द हो गये और तन-मन से काम में तन्मय होकर लग गये। ऐसा लगता था कि वह अपनी सारी शक्ति जुटाना चाह रहे थे, अपना सारा अस्तित्व उसमें लगा देना चाहते थे, और सचमुच उन्होंने अपनी एक श्रेष्ठतम कृति तैयार की। किसी को इसमें तनिक भी सन्देह नहीं था कि ईनाम उन्हीं को मिलेगा। तस्वीर प्रतियोगिता में भेजी गयी; उनकी कृति के मुकाबले अन्य सभी तस्वीरें दिन के सामने रात जैसी थीं। तब फैसला करने वालों में से एक ने, जो अगर मैं गलती नहीं करता तो एक पादरी था, एक ऐसी अप्रत्याशित आलोचना की जिसे सुनकर सभी दंग रह गये। 'इसमें तो शक नहीं कि कलाकार ने अपनी कृति में बड़ी प्रतिभा का परिचय दिया है,' वह बोले, 'लेकिन उसके चेहरों में कोई पवित्रता का भाव नहीं है, बल्कि इसके विपरीत उन आकृतियों की आँखों में कोई पैशाचिक भाव है, मानों कलाकार ने किसी दूषित प्रभाव से प्रेरित होकर उन्हे बनाया हो।' चित्र को अधिक ध्यान से देखने पर सभी उपस्थित लोग वक्ता की बात से सहमत होने पर विवश हो गये। मेरे पिताजी अपनी बनायी हुई तस्वीर की ओर झपटे मानों स्वयं इस अत्यन्त अपमानजनक टिप्पणी के सत्य होने की जाँच करना चाहते हों और यह देखकर सहम उठे कि उन्होंने लगभग सभी आकृतियों की आँखें उस सूदखोर की आँखों जैसी बनायी थीं। वे उसे ऐसी पैशाचिक विनाशकारी शक्ति से देख रही थीं कि वह अनायास ही सिहर उठे। उनका चित्र अस्वीकार कर दिया गया, और अकथनीय क्षोभ के साथ उन्होंने देखा कि पुरस्कार उनके शिष्य को मिल गया। वह जिस तरह रोष से भरे हुए घर लौटे उसे शब्दों में बयान नहीं किया

जा सकता। वह मेरी माँ पर लगभग टूट पड़े, हम बच्चों को भगा दिया, अपनी तूलिकाएँ और ईजिल तोड़ डाला, सूदखोर के चित्र को दीवार पर से उतारा, एक चाकू मँगवाया और चूल्हे में आग सुलगाने को कहा; उनका इरादा उस तस्वीर को काटकर टुकड़े-टुकड़े कर देने और जला देने का था। वह अपनी इस योजना को पूरा करने की तैयारी कर ही रहे थे कि इतने में उनके एक परिचित कमरे में आये; वह भी उन्हीं की तरह चित्रकार थे जो हमेशा खुशमिजाज और सन्तुष्ट रहते थे और कभी किसी दूर की लालसा से चिन्तित नहीं होते थे, जो काम भी मिल जाता था वही खुश होकर करते रहते थे और अपने दोस्तों के साथ बैठकर खाना खाने या शराब पीने में उन्हें इससे भी ज्यादा सुख मिलता था।

" 'क्या कर रहे हो, किसी चीज को जलाने की तैयारी कर रहे हो?' उन्होंने तस्वीर की ओर बढ़ते हुए पूछा। 'मेरे यार, यह तुम्हारी सबसे अच्छी कृतियों में से है। उस सूदखोर की तस्वीर है न जो अभी कुछ ही दिन पहले मरा है; अरे, बिल्कुल उसी की सूरत है। हूबहू वही शक्ल है, जिन्दा से भी असली लगती है। किसी भी तस्वीर में इस तरह की आँखे नहीं मिलतीं।'

" 'अच्छा, अभी देखते हैं कि आग में वे कैसी दिखायी देती हैं,' पिताजी ने उसे आग की लपटों मे झोंक देने की तैयारी करते हुए कहा।

" 'ठहरो, भगवान के लिए!' उनके मित्र ने चिल्लाकर कहा, 'अगर तुम उसे देखना भी गवारा नहीं कर सकते तो वह तस्वीर मुझे दे दो।'

"पहले तो पिताजी किसी हालत में ऐसा करने को राजी नहीं थे, लेकिन आखिरकार वह मान गये और उनके मस्तमौला दोस्त अपनी इस नयी उपलब्धि पर खुश होकर वह तस्वीर अपने साथ लेकर चले गये।

"उनके चले जाने के बाद मेरे पिताजी ने फौरन अपने मन में शान्ति अनुभव की। उन्हें ऐसा लगा कि जैसे वह तस्वीर हट जाने से उनकी आत्मा पर से बहुत बड़ा बोझ उतर गया हो। जिस द्वेष और ईर्ष्या का उन्होंने परिचय दिया था, और उनके चरित्र में जो परिवर्तन आया था उस पर उन्हें स्वयं आश्चर्य था। अपने किये पर दुबारा दृष्टिपात करके वह उदास हो गये और उन्होंने बहुत पछताते हुए कहा:

" 'नहीं, यह ईश्वर की ओर से दिया गया दण्ड होगा; मैं इसी योग्य था कि मुझे उस तस्वीर के लिए इस तरह लज्जित किया जाये। वह मैंने अपने एक साथी चित्रकार को नष्ट करने के उद्देश्य से बनायी थी। मेरी तूलिका ईर्ष्या की पैशाचिक भावना से प्रेरित थी, और उस चित्र में इस दानवी प्रभाव का अभिव्यक्त होना अनिवार्य था।'

"वह तुरन्त अपने भूतपूर्व शिष्य की खोज में निकल पड़े, उसे बड़े प्यार से गले लगाकर क्षमा माँगी, और उसके प्रति अपराध करने की जो भावना उनके मन में थी उसका यथासम्भव प्रायश्चित करने की कोशिश की। उनकी चित्रकला फिर पूर्ववत् अपने निर्विघ्न मार्ग पर चलने लगी; लेकिन उनके चेहरे पर अब विचारमग्न रहने का भाव आ गया था। वह अब पहले से अधिक पूजा-पाठ करने लगे थे, पहले से बहुत कम बोलने लगे थे और अब

लोगों के बारे में अपनी राय उतना खुलकर नहीं देते थे; उनके चरित्र का कठोर बाह्य रूप कोमल पड़ने लगा था। इसके कुछ ही समय बाद उन्हें एक और क्रूर आघात लगा। बहुत समय से वह अपने उस मित्र से नहीं मिले थे जिन्होंने उनसे वह तस्वीर माँगी थी। वह उनसे मिलने जाने की योजना ही बना रहे थे कि अचानक वह मित्र उनके कमरे में आ पहुँचे। थोड़ी देर शिष्टाचार की बातें होने के बाद उन मित्र ने कहा:

" 'सच कहता हूँ, भाई, तुम उस तस्वीर को जो जला देना चाहते थे तो वह ठीक ही था। भगवान जाने उसमें न जाने कौन-सी ऐसी अजीब बात है... मैं जादू-टोने में विश्वास नहीं रखता लेकिन, कमस खाकर कहता हूँ, उसमें कोई दुष्ट शक्ति छिपी हुई है...

" 'क्या मतलब तुम्हारा?' मेरे पिताजी ने पूछा।

" 'अरे, जब से मैंने उसे अपने कमरे में टाँगा तभी से मुझे इस घुटन का आभास होने लगा... जैसे मैं किसी की हत्या कर देना चाहता हूँ। जिन्दगी-भर कभी ऐसा नहीं हुआ कि मुझे रात को नींद न आती हो, लेकिन अब न सिर्फ यह कि मुझे नींद नहीं आती थी बल्कि ऐसे भयानक सपने भी दिखायी देते थे कि... मैं ठीक से यह भी नहीं कह सकता कि वे सपने ही होते या कुछ और: मुझे ऐसा लगता था कि जैसे कोई भूत मेरा गला घोंटे दे रहा है और मुझे वह कमबख्त बूढ़ा दिखायी देता रहता था। सचमुच, मेरी समझ में नहीं आता कि मैं अपने दिमाग की हालत कैसे बयान करूँ। आज तक कभी मैंने ऐसा नहीं महसूस किया। उन दिनों मैं तमाम वक्त पागलों की तरह एक किस्म का डर महसूस करता हुआ, कोई भयानक बात होने की अरुचिकर आशंका लिये इधर-उधर घूमता रहता था। मैं किसी से कोई खुशी की या दिल से निकली हुई बात नहीं कह सकता था: ऐसा लगता था जैसे कोई छिपकर मुझ पर नजर रख रहा है। और जिस क्षण वह तस्वीर मैंने अपने एक भतीजे को दे दी, जिसने बड़ी खुशामद करके उसे मुझ से माँगा था, मुझे ऐसा लगा कि जैसे मेरे कन्धों पर से किसी पत्थर का बोझ हट गया हो: फौरन मेरी सारी जिन्दादिली लौट आयी, जैसा कि तुम देख सकते हो। हाँ, मेरे दोस्त, तुमने शैतान में जान डाल दी थी!'

"पिताजी ने बड़े ध्यान से उनकी बात सुनी और अन्त में पूछा:

" 'हो-हो! तो अब वह तस्वीर तुम्हारे भतीजे के पास है?'

" 'वह भी उसे बर्दाश्त नहीं कर पाया,' 'उनके मस्तमौला दोस्त ने जवाब दिया, 'ऐसा लगता है कि उस बूढ़े सूदखोर की आत्मा उस तस्वीर में उतर आयी है: वह झट से तस्वीर के फ्रेम के बाहर निकल आता था और कमरे में इधर-उधर टहलने लगता था; और मेरे भतीजे ने जो बातें मुझे बतायीं वे तो बिल्कुल समझ में ही नहीं आतीं। अगर मुझे खुद उनका कुछ तजुर्बा न हो चुका होता तो मैं समझ लेता कि वह पागल है। उसने तस्वीरें जमा करने वाले किसी आदमी के हाथ वह तस्वीर बेच दी, जो खुद भी बहुत दिन उसे अपने पास नहीं रख सका और उसने किसी दूसरे के हाथ उसे बेच दिया।'

"इस वृत्तान्त का मेरे पिताजी पर बहुत गहरा असर हुआ। वह सचमुच खोये-खोये से रहने लगे, उन पर उदासी छा गयी और अन्त में उन्हें पक्का विश्वास हो गया कि उनकी

तूलिका ने शैतान के साधन का काम किया था, कि उस सूदखोर की जिन्दगी का कुछ हिस्सा जरूर उस तस्वीर में प्रवेश कर गया था और वह अब लोगों को परेशान कर रहा था, उनमें पैशाचिक भ्रम पैदा कर रहा था, कलाकारों को भटका रहा था, उन्हें ईर्ष्या की भयानक यातना से त्रस्त कर रहा था, इत्यादि-इत्यादि। उन्हीं दिनों उनके परिवार पर जो तीन मुसीबतें आयीं, अचानक उनकी पत्नी, बेटी और नन्हे बेटे की मृत्यु, उनको उन्होंने अपने लिए दैवी दण्ड मान लिया और फौरन इस संसार से वैराग्य ले लेने का फैसला किया। जैसे ही मैं नौ साल का हुआ उन्होंने मुझे ललित-कला अकादमी में भरती करा दिया, और पहले अपने सारे कर्ज चुकाकर दूर के किसी मठ की ओर चल दिये, जहाँ उन्होंने जल्दी ही मठ की दीक्षा ले ली। वहाँ उन्होंने अपने सभी साथियों को अपने जीवन के कठोर संयम से और मठ के सभी नियमों के विधिवत् पालन से चकित कर दिया। जब मठ के बड़े पादरी को पता चला कि वह पहले एक कुशल चित्रकार रह चुके हैं तो उन्होंने उनको गिरजाघर के लिए मुख्य देव-प्रतिमा का चित्रांकन करने का काम सौंपा। लेकिन एक विनम्र भिक्षु की तरह उन्होने साफ कह दिया कि वह अपनी तूलिका उठाने के लिए अयोग्य थे, कि उनकी तूलिका कलंकित हो चुकी थी, कि उन्हें पहले कठोर परिश्रम करके और अपार आत्मत्याग का परिचय देकर अपनी आत्मा को शुद्ध करना होगा ताकि वह एक बार फिर ऐसे काम का बीड़ा उठाने के योग्य बन सकें। उनके ऊपर कोई दबाव नहीं डाला गया और उन्होनें मठ में अपनी दिनचर्या के नियम-संयम को अधिकतम सीमा तक कठोर बना लिया। अन्ततः उन्हें लगा कि यह भी पर्याप्त नहीं है और यह अभी काफी कठोर नहीं है। मठ के बड़े पादरी का आशीर्वाद लेकर वह आश्रम में चले गये ताकि वहाँ बिल्कुल अकेले रह सकें। वहाँ उन्होंने पेड़ों की टहनियों से अपने लिए एक कुटी बनायी, कन्दमूल खाकर अपना पेट भरते रहे और पत्थर ढो-ढोकर एक जगह से दूसरी जगह पहुँचाते रहे, एक जगह निश्चल खड़े रहकर दोनों हाथ आकाश की ओर उठाकर सूर्योदय से सूर्यास्त तक प्रार्थना करते रहे। दूसरे शब्दों में, ऐसा प्रतीत होता था कि वह अपनी सहनशीलता की चरम परीक्षा ले रहे थे और उस असाधारण आत्म-त्याग की सीमा तक पहुँच जाना चाहते थे जिसके उदाहरण आमतौर पर सन्तों के जीवन में ही मिलते हैं। इस तरह वह कई वर्ष तक अपने शरीर को कष्ट देते रहे और इसके साथ ही प्रार्थना की जीवनदायिनी शक्ति से उसका पोषण भी करते रहे। अन्ततः एक दिन वह मठ में लौट आये और बड़ी दृढ़ता से वहाँ के बड़े पादरी से बोले: 'अब मैं तैयार हूँ। अगर भगवान की इच्छा हुई तो मैं अपना निर्दिष्ट काम पूरा करूँगा।' अपने चित्र के लिए उन्होंने जो विषय चुना वह था ईसा का जन्म। वह पूरे साल-भर उस चित्र पर काम करते रहे, वह कभी अपनी कोठरी से बाहर नहीं निकले, मुश्किल से ही वह मठ का साधारण भोजन करते थे और लगातार प्रार्थना करते रहते थे। वर्ष का अन्त होने पर चित्र बनकर तैयार हो गया। निस्सन्देह वह कला का चमत्कार था। हालाँकि ललित-कला का कोई विशेष ज्ञान न वहाँ के भिक्षुओं को था और न उनके बड़े पादरी को, फिर भी वे उन आकृतियों की विलक्षण पवित्रता को देखकर आश्चर्यचकित रह गये। अपने बच्चे को झुककर निहारती हुई ईश्वर की माता के चेहरे पर दिव्य विनम्रता और कोमलता की दिव्य

ज्योति, बाल-ईश्वर की आँखों में गहरी बुद्धिमत्ता, जो कहीं बहुत दूर कुछ देखती हुई प्रतीत होती थीं, राजाओं की गम्भीर मूकता, जो इस दिव्य चमत्कार से विस्मित होकर श्रद्धा के भाव से प्रभु के चरणों में शीश नवाये हुए थे, और फिर उस पूरे चित्र में व्याप्त पवित्र, अकथनीय शान्ति—इन सब बातों को ऐसे सामंजस्यपूर्ण सशक्त ढंग से और ऐसे सप्राण रंगों में चित्रित किया गया था कि उसका प्रभाव किसी जादू से कम नहीं था। सभी भिक्षु इस नयी देव प्रतिमा के सामने घुटने टेककर बैठ गये और मठ के विस्मय-विभोर बड़े पादरी ने श्रद्धा-भाव से घोषणा की: 'नहीं, ऐसा चित्र कोई मनुष्य केवल मानवीय कला की सहायता से नहीं बना सकता: एक उच्चतर, पवित्र शक्ति तुम्हारी तूलिका का पथ-प्रदर्शन कर रही थी, और तुम्हारी इस कृति को देवलोक का आशीर्वाद प्राप्त है।'

''इसी समय मैने अकादमी में अपनी शिक्षा पूरी की और मुझे स्वर्ण-पदक मिला और इस पुरस्कार के साथ ही इटली की यात्रा करने की उल्लासमय आशा भी जागृत हुई—जो हर बीस-वर्षीय कलाकर का चिरपोषित स्वप्न होता है। मेरे लिए बस अपने पिता से विदा लेना बाकी रह गया था, जिनसे मैं बारह वर्ष पहले बिछुड़ा था। मैं मानता हूँ कि उनकी आकृति भी बहुत पहले ही मेरी समृति में धुँधली पड़ गयी थी। मैं उनके कठोर संयम के जीवन की कुछ चर्चा सुन चुका था और मैंने अपने आपको एक सन्यासी की सूखी हुई सूरतवाले किसी आदमी से मिलने को तैयार किया, जो अपनी कोठरी और अपनी प्रार्थनाओं को छोड़कर इस संसार की अन्य सभी चीजों से विरक्त हो चुका था, जो निरन्तर उपवास रखते-रखते और जागते-जागते बिल्कुल जर्जर हो गया था और मुरझा गया था। मेरे आश्चर्य की कल्पना कीजिये जब मैंने अपने सामने एक वैभवशाली, सौम्य धर्मात्मा को खड़ा पाया! उनके चेहरे पर कठोर तपस्या के कोई चिह्न नहीं थे और वह नैसर्गिक उल्लास की आभा से चमक रहा था। उनकी बर्फ जैसी सफेद दाढ़ी और वैसे ही चाँदी के रंग के महीन, लगभग पारलौकिक बाल बड़े मनोरम ढंग से उनके सीने पर और उनके काले चोंगे की सिलवटों पर बिखरे हुए थे, और नीचे उनके मठ की सीधी-सादी पोशाक की कमर पर बँधी हुई डोरी तक आ गये थे। लेकिन मेरे लिए सबसे अधिक उल्लेखनीय उनके वे शब्द थे जो उन्होंने कला के बारे में कहे, वे शब्द और विचार जिनके बारे में मैं जानता हूँ कि उन्हें बहुत समय तक मैं अपनी आत्मा में सुरक्षित रखूँगा और मेरी हार्दिक इच्छा है कि मेरे सभी साथी कलाकार ऐसा ही करें।

'' 'मैं तुम्हारी राह देखता रहा हूँ, बेटा,' जब मैं उनका आशीर्वाद लेने गया तो उन्होंने कहा। 'तुम अब उस मार्ग पर अग्रसर होने वाले हो जिस पर तुम्हें जीवन भर चलना है। तुमने जो मार्ग चुना है वह एक पवित्र मार्ग है, उससे कभी पथभ्रष्ट न होना। तुममें प्रतिभा है; प्रतिभा ईश्वर की सबसे बहुमूल्य देन है—उसे व्यर्थ नष्ट न करना। जो कुछ भी देखना उसे जाँचना-परखना और उसका अध्ययन करना, हर चीज को अपनी तूलिका के वश में करना, लेकिन हर चीज के आन्तरिक अर्थ को खोजना सीखना, और सबसे बढ़कर सृष्टि के अपार रहस्य की थाह पाने की चेष्टा करना। धन्य हैं वे गिने-चुने लोग जो इस रहस्य को जानते हैं। प्रकृति की कोई भी वस्तु उनके लिए तुच्छ नहीं होती। सृष्टा और कलाकार महत्वहीन चीजों में भी उतने ही

सशक्त रूप से प्रकट होता है जैसे महान चीजों में; जो कुछ तुच्छ है उसमें भी उसकी कृति में कोई तिरस्कार का भाव नहीं होता, क्योंकि सृष्टा की सुन्दर आत्मा अदृश्य रूप से उसमें व्याप्त रहती है, और जो तुच्छ है वह उसकी आत्मा की आग में तपकर उत्कृष्ट अभिव्यक्ति पाता है। समस्त कला में मनुष्य के लिए दिव्यता का, पारलौकिक स्वर्ग का एक संकेत होता है, और इसी बात की बदौलत वह समस्त पदार्थ से परे पहुँच जाती है। महान कलाकृति इस पृथ्वी की सभी चीजों से उसी प्रकार श्रेष्ठ होती है जिस प्रकार नैसर्गिक सुख समस्त पार्थिव दम्भ से श्रेष्ठ होता है, उसी प्रकार जैसे सृजन विनाश से श्रेष्ठ होता है, जैसे फरिश्ता अपनी दीप्त आत्मा की मासूमियत की वजह से शैतान की समस्त अथाह शक्तियों से और उसके अपार दम्भपूर्ण उन्माद से श्रेष्ठ होता है। तुम्हारे पास जो कुछ है उसे कला की वेदी पर न्योछावर कर दो और अपने समस्त हृदय से उससे प्रेम करो। पार्थिव लालसा से भरे हुए भावावेश के साथ उससे प्यार न करो, बल्कि शान्त नैसर्गिक भावावेश के साथ उससे प्यार करो; इसके बिना मनुष्य अपने आपको इस पृथ्वी से ऊँचा उठाने में असमर्थ रहता है और वह सांत्वना के चमत्कारी स्वरों का उच्चारण नहीं कर सकता। क्योंकि सभी प्राणियों को सांत्वना और शान्ति प्रदान करने के लिए ही इस पृथ्वी पर महान कलाकृति का अवतरण होता है। वह आत्मा को झंकृत नहीं कर सकती, बल्कि वह एक सुमधुर प्रार्थना होती है जो ईश्वर तक पहुँचने के लिए सतत् सचेष्ट रहती है। लेकिन कुछ क्षण ऐसे आते है, अन्धकार के क्षण...

''वह रुक गये और मैंने देखा कि उनका निर्मल चेहरा उदास हो गया, जैसे अचानक उस पर से कोई बादल गुजर गया हो।

'' 'मेरे जीवन में भी ऐसा एक अवसर आया था,' उन्होंने कहा 'आज तक मैं यह समझ नहीं पाया हूँ कि उस विचित्र आकृति के पीछे, जिसका चित्र मैंने बनाया था, क्या चीज थी। निश्चय ही वह कोई पैशाचिक चीज थी। मैं जानता हूँ कि संसार शैतान के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करता, इसलिए मैं उसकी चर्चा नहीं करूँगा। मैं केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि मैंने उसका चित्र घोर अरुचि से बनाया था, और मुझे अपने काम के प्रति तनिक थी आकर्षण नहीं था। मैंने अपनी भावनाओं को दबाने की और मेरी आत्मा में जो घृणा थी उसका दमन करके उसका वैसा ही चित्र बनाने की चेष्टा की जैसा कि वह जीवन में सचुमच था। वह कोई कलाकृति नहीं थी, और यही कारण है कि जो लोग भी उसे देखते हैं वे जिन भावनाओं से प्रभावित होते हैं वे बेचैन, परेशान भावनाएँ होती हैं; वे कलाकार की भावनाएँ नहीं होती क्योंकि कलाकार अपनी चिन्ता में भी शान्ति का संचार कर देता है। मैंने सुना है कि यह चित्र एक आदमी के पास से दूसरे के पास जा रहा है और बेचैनी फैला रहा है, कलाकार के हृदय में ईर्ष्या की, अपने जैसे चित्रकार के प्रति कुत्सित घृणा की भावना और सताने की और उत्पीड़ित करने की दुष्टतापूर्ण इच्छा पैदा कर रहा है। वह सर्वशक्तिमान तुम्हें ऐसे भयानक आवेशों से बचाये! उनसे बुरी कोई चीज नहीं होती। किसी दूसरे को लेशमात्र भी यातना पहुँचाने से कहीं अच्छा है कि तुम स्वयं कठोर से कठोर यातना सहन कर लो।

अपनी आत्मा की शुद्धता को बनाये रखना। जिसे प्रतिभा का वरदान मिला है उसकी आत्मा शुद्धतम होनी चाहिये। उसके साथियों के बहुत-से दोष क्षमा किये जा सकते हैं लेकिन उसके दोष नहीं क्षमा किये जा सकते। जो आदमी अपने घर से बहुत सजीले कपड़े पहनकर तड़क-भड़क के साथ निकलता है उस पर पास से गुजरती हुई गाड़ी से कीचड़ की एक छींट पड़ते ही हर आदमी उसे घेरकर खड़ा हो जाता है, उसकी ओर उँगली उठाता है और उसके इस दोष की चर्चा करता है, जबकि यही लोग दूसरे राहगीरों के रोजमर्रा के मामूली कपड़ों पर लगे हुए इससे भी बुरे ढेरों धब्बों को देखते तक नहीं। क्योंकि रोजमर्रा के कपड़ों पर धब्बे दिखायी नहीं देते।'

''उन्होंने मुझे आशीर्वाद दिया और अपने गले लगा लिया। अपने जीवन में कभी मैंने इतना उत्कर्ष अनुभव नहीं किया है और न ही कभी मैं इतना भावविह्वल हुआ हूँ। पुत्र होने के नाते जितना स्नेह उचित था उससे भी बढ़कर श्रद्धा के साथ मैं उनके सीने से चिपट गया और मैंने उनके लहराते हुए रुपहले बालों पर अपने होंठ रख दिये। उनकी आँखों में आँसू चमक रहे थे।

'' 'मैं तुमसे बस मेरी एक इच्छा पूरी करने को कहता हूँ, बेटा', जब हम दोनों एक दूसरे से विदा होनेवाले थे तो उन्होंने कहा। 'हो सकता है कि जिस तस्वीर की मैंने चर्चा की है वह किसी दिन कहीं तुम्हें दिखायी दे जाये। उसकी लाजबाव आँखों से और उनके अस्वाभविक भाव से तुम उस तस्वीर को फौरन पहचान लोगे। मैं तुमसे बस इतना कहना चाहता हूँ कि हर कीमत पर उसे नष्ट कर देना... '

''जैसा कि आप लोग खुद समझ सकते हैं, स्वाभाविक बात थी कि मैंने उनकी यह इच्छा पूरी करने का वचन दे दिया। पिछले पन्द्रह वर्षों में मुझे कोई ऐसी चीज नहीं दिखायी दी थी जो मेरे पिताजी की बयान की हुई तस्वीर से थोड़ी-बहुत भी मिलती हो, आज इस नीलाम में जाकर मुझे यह तस्वीर दिखायी दी।''

इतना कहकर कलाकार ने अपना वाक्य पूरा किये बिना ही उस तस्वीर को दुबारा देखने के लिए दीवार की ओर नजर फेरी। श्रोताओं की सारी भीड़ ने भी ऐसा ही किया; वे सभी उस असाधारण चित्र को देखने के लिए एक साथ मुड़े। लेकिन उन्हें यह देखकर बहुत आश्चर्य हुआ कि दीवार पर तस्वीर नहीं थी। पूरी भीड़ में बहुत-सी मिली-जुली आवाजों की एक लहर दौड़ गयी और उसमें ''चोरी'' का शब्द साफ पहचाना जा सकता था। जब श्रोताओं का ध्यान यह वृत्तान्त सुनने की ओर लगा हुआ था किसी ने वह तस्वीर उड़ा दी थी। इसके बाद बहुत देर तक वहाँ पर मौजूद सभी लोगों को इस बात का पूरा विश्वास नहीं था कि उन्होंने सचमुच वे असाधारण आँखें देखी थीं, या वह सब कुछ केवल एक छलावा था जो देर तक पुरानी तस्वीरें देखते रहने के कारण थकी हुई उनकी आँखों के सामने क्षण-भर के लिए आकर गायब हो गया था।

उन्नीसवीं शताब्दी के महान रूसी गद्यकारों के अग्रज निकोलाई गोगोल (1809-1852) विश्व-साहित्य के अमिट हस्ताक्षर हैं। रूसी साहित्य में काल्पनिक, रूमानी और असाधारण घटनाओं व पात्रों के आदर्शीकरण और आलंकारिक चित्रण की जो पुरानी परिपाटी चली आ रही थी, उसे पूरी तरह नकारते हुए गोगोल ने अपनी रचनाओं में सामाजिक जीवन की सच्ची और स्वाभाविक छवि अंकित की।

गार्गी प्रकाशन

गार्गी प्रकाशन की वेबसाइट के लिए स्कैन करें।

ISBN 81-87772-24-7

मूल्य: 25 रुपये